हिन्दुस्तान एक्सप्रेस समूह

राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक

हिन्दुस्तान एक्सप्रेस

मध्यप्रदेश राजस्थान हरियाणा छत्तीसगढ़ महाराष्ट्र से प्रकाशित

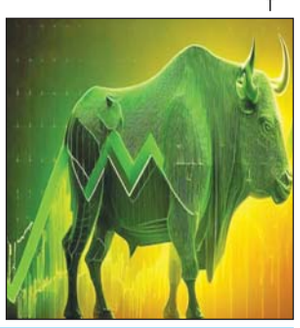

डाक पंजीयन क्रं. 173/15-17 | 5 एनएसई ने कुछ इंडेक्स डेरिवेटिव | सम्पादकीय | महाराष्ट्र में सरकार गठन में देरी से बिगड़ रहा ... | मल्टीबैगर PSU स्टॉक ने दिया 2100 प्रतिशत का | 5

वर्ष 18 ● अंक 284 ई-पेपर के लिए लॉगइन करें -www.hindustanexpress.online भोपाल, रविवार 01 दिसम्बर 2024 email - hindustanexpressbhopal@Gmail.com, hindustanexpresshe@Gmail.com मूल्य 2.00 रुपया, पृष्ठ 8

महाराष्ट्र में सरकार गठन को लेकर खींचतान जारी, गृह मंत्रालय को लेकर फंसा है पेंच

मुंबई। महाराष्ट्र विधानसभा चुनाव का रिजल्ट आए 7 दिन बीत चुके हैं। भाजपा, शिवसेना शिंदे और एनसीपी अजित पवार गुट यानी महायुति ने 288 में से 230 सीटें जीतीं, लेकिन अब तक शपथ पर सस्पेंस बना हुआ है। सूत्रों के मुताबिक, एकनाथ शिंदे डिप्टी ष्टरू का पद लेने को तैयार हैं, लेकिन गृह मंत्रालय पर अड़े हुए हैं। 29 नवंबर को शिंदे दिल्ली में गृह मंत्री अमित शाह से मुलाकात के बाद मुंबई लौटे और सभी कार्यक्रम रद्द कर अपने गांव सातारा निकल गए। गांव में उनकी तबीयत बिगड़ गई है। मुंबई से डॉक्टरों की टीम पहुंची है। इस बीच, भाजपा विधायक दल की

बैठक भी दो दिन आगे बढ़ गई है। सूत्रों के मुताबिक, 1 दिसंबर को होने वाली बैठक अब 3 दिसंबर को होगी। इस दिन दिल्ली से दो ऑब्जर्वर मुंबई आएंगे और विधायकों से चर्चा के बाद आधिकारिक रूप से सीएम फेस अनाउंस करेंगे। उधर, भाजपा के एक वरिष्ठ नेता ने भास्कर को बताया कि संघ से हरी झंडी मिलने के बाद ष्टरू पद के लिए देवेंद्र फडणवीस का नाम फाइनल कर दिया गया है। शपथ ग्रहण 5 दिसंबर को दोपहर 1 बजे मुंबई के आजाद मैदान में होगा। शिवसेना और एनसीपी की ओर से एक-एक डिप्टी ष्टरूभी शपथ लेंगे।

विकास के लिये केवल सरकार पर निर्भर न रहें: न्यायमूर्ति श्री माहेश्वरी

- हरि पर्वत अर्बन वन परियोजना का पौधे रोपकर किया शुभारंभ

ग्वालियर। अलापुर पहाड़ी पर सिटी फोरेस्ट विकसित कर हरीतिमा की चादर ओढ़ाई जा रही है। इसे 'हरि पर्वत' नाम दिया गया है। 'हरि पर्वत' के एक हिस्से में विकसित किए जा रहे मनोरम 'हरि आनंद वन' में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री जितेन्द्र कुमार माहेश्वरी एवं मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री सुरेश कुमार कैत ने पौधे रोपकर ग्वालियर की इस सिटी फोरेस्ट परियोजना का शुभारंभ किया। न्यायमूर्ति श्री माहेश्वरी ने यलो फायकल प्रजाति एवं प्रदेश के मुख्य न्यायाधीश श्री कैत ने कचनार का पौधा रोपा।

इस अवसर पर सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री जितेन्द्र कुमार माहेश्वरी ने शहरवासियों से आह्वान किया कि वे श्रमदान कर इस अच्छे मिशन से जुड़ें।

इसी प्रकार के रचनात्मक कार्यों से वास्तविक विकास होता है। उन्होंने कहा विकास के लिये केवल सरकार पर निर्भर न रहें, सरकार आपको विकास के अवसर मुहैया कराती है, लेकिन उन्हें हासिल करने के प्रयास स्वयं करने होते हैं। न्यायमूर्ति श्री माहेश्वरी ने कहा कि पथरीला इलाका होने से ग्वालियर का तापमान ज्यादा रहता है। तापमान को कम करने के लिये वनीकरण से अच्छा कोई उपाय नहीं है। खुशी की बात है कि इस दिशा में 'हरि पर्वत' के रूप में अर्बन वन विकसित करने का काम हाथ में लिया गया है। मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री सुरेश कुमार कैत ने इस अवसर पर आह्वान किया कि वैवाहिक वर्षगांठ, जन्मदिन, तीज-त्यौहार एवं अपने पूर्वजों की स्मृति में शहरवासी 'हरि पर्वत' पर पौधे रोपें। इससे शहर में हरीतिमा बढ़ेगी और पर्यावरण भी स्वच्छ रहेगा। उच्च न्यायालय ग्वालियर के प्रशासनिक न्यायाधिपति श्री आनंद पाठक ने कहा कि 'हरि पर्वत' पर आज एक पौधरोपण भर नहीं है, अपितु रचनात्मक विचार का अंकुरण है। उन्होंने भरोसा जताया कि सभी के साझा प्रयासों से यह विचार निश्चित ही पल्लवित व पुष्पित होगा। न्यायमूर्ति श्री पाठक ने अन्य पहाड़ियों पर भी इसी तरह अर्बन वन विकसित कर हरा भरा करने का आह्वान भी किया।

इस अवसर पर कलेक्टर श्रीमती रुचिका चौहान ने बताया कि न्यायमूर्ति श्री आनंद पाठक की पहल से प्रेरित होकर प्रदेश सरकार की सिटी फॉरेस्ट योजना के तहत गत 7 नवम्बर को अलापुर पहाड़ी को अर्बन वन के लिये तैयार करने का काम शुरू किया गया था। गत 27 नवम्बर को यह पहाड़ी अर्बन वन के लिये तैयार कर ली गई। आज 'हरि पर्वत' के रूप में इसका शुभारंभ हुआ है। उन्होंने बताया कि अलापुर **शेष पृष्ठ 2 पर ...**

ब्रिटेन व जर्मनी की यात्रा मध्यप्रदेश के विकास में मील का पत्थर साबित होगी : डॉ. मोहन यादव

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने राजाभोज विमानतल पर विदेश यात्रा से लौटने पर आयोजित अभिनंदन समारोह को किया संबोधित

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ब्रिटेन व जर्मनी की छह दिवसीय विदेश दौरे से भोपाल लौटने पर राजाभोज विमानतल पर आयोजित अभिनंदन समारोह को संबोधित करते हुए कहा कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की आर्थिक व्यवस्था से मध्यप्रदेश को ब्रिटेन में 60 हजार करोड़ और जर्मनी में 18 हजार करोड़ के निवेश प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं। निवेश संवर्धन एवं औद्योगिक विकास के लिए की गई ब्रिटेन व जर्मनी की यात्रा के दौरान हमने एक-एक मिनट का उपयोग प्रदेश की बेहतरी के लिए किया है। निवेश के संबंध में ब्रिटेन और जर्मनी की विदेश यात्रा मध्यप्रदेश के विकास में मील का पत्थर साबित होगी। मध्यप्रदेश को ब्रिटेन व जर्मनी में मिले निवेश प्रस्तावों के लिए मैं प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का आभार व्यक्त करता हूं कि उनके नेतृत्व में देश की सुदृढ़ अर्थव्यवस्था व आर्थिक नीतियों से प्रभावित होकर ब्रिटेन और जर्मनी जैसे देश मध्यप्रदेश में निवेश करने के लिए आतुर हैं। हम सभी प्रदेशवासी मिलकर मध्यप्रदेश को देश का नंबर एक राज्य बनाएंगे। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव के 6 दिवसीय ब्रिटेन व जर्मनी दौरे से लौटकर स्टेट हैंगर पर उप मुख्यमंत्री, प्रदेश शासन के मंत्री, पार्टी पदाधिकारी, जनप्रतिनिधि व कार्यकर्ताओं ने अभिनंदन किया।

जहां रोजगार मिलेगा, मध्यप्रदेश वहां पहले खड़ा दिखाई देगा

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा कि यह एक सुखद संयोग है कि मैं ब्रिटेन और जर्मनी की यात्रा पर था। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की आर्थिक व्यवस्था के कारण भारत ने पिछले वर्ष ही ब्रिटेन को पीछे छोड़ते हुए विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला देश बना है। दूसरा देश जर्मनी है, जिसे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व में हमारे देश की अर्थव्यवस्था पीछे छोड़ने की ओर तेजी से आगे बढ़ रही है। आर्थिक विकास के लिए पूरी दुनिया का अपना-अपना एजेंडा है, लेकिन मध्यप्रदेश किसी भी मामले में पीछे नहीं है। मध्यप्रदेश अपनी क्षमता, प्रतिभा, कौशल और मेहनत से लगातार आगे बढ़ रहा है। मध्यप्रदेश के विकास व रोजगार के लिए भाजपा सरकार कार्य कर रही है। जहां भी रोजगार मिलेगा, वहां मध्यप्रदेश पहले खड़ा दिखाई देगा। मध्यप्रदेश युवाओं के आकांक्षाओं को पंख देकर रोजगार के साधन उपलब्ध कराएगा।

भाजपा सरकार की कार्यप्रणाली से प्रभावित होकर जर्मनी ने किया निवेश

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा कि कुछ माह पहले भोपाल के अचारपुरा में एक फैक्ट्री का शुभारंभ किया गया था। यहां जर्मनी के अधिकारियों ने देखा कि मध्यप्रदेश की भाजपा सरकार किस तरह से औद्योगिक निवेश के लिए कार्य कर रही है। उद्योगों को बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराने और निवेश के अनुकूल वातावरण होने के कारण ही जर्मनी की कंपनी ने अचारपुरा में निवेश किया। ब्रिटेन व जर्मनी की यात्रा मध्यप्रदेश के और बेहतर स्थान पर पहुंचाने के लिए मील का पत्थर साबित होगी। सेमीकंडक्टर के क्षेत्र में निवेश के लिए मध्यप्रदेश को 25 हजार करोड़ का प्रस्ताव मिला है। समाज आधारित रिसर्च के लिए भी मध्यप्रदेश सरकार ने एक विश्वविद्यालय से एमओयू किया है। मध्यप्रदेश के विकास के लिए संभाग स्तर पर रीजनल इंडस्ट्रियल कॉन्क्लेव बहुत कारगर साबित हो रहे हैं। आगामी 7 दिसंबर को नर्मदापुरम में रीजनल इंडस्ट्रियल कॉन्क्लेव करने जा रहे हैं। मध्यप्रदेश के समग्र विकास के लिए प्रदेश के सभी जिलों का विकास किया जाएगा। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा कि हम और आप सभी मिलकर मध्यप्रदेश को देश का सबसे बेहतर राज्य बनाने के लिए कार्य करेंगे। इस अवसर पर उप मुख्यमंत्री श्री जगदीश देवडा, प्रदेश शासन के मंत्री श्री श्री तुलसी सिलावट, श्री विश्वास सारंग, श्रीमती कृष्णा गौर, श्री विजय शाह, श्री गौतम टेटवाल, प्रदेश महामंत्री व विधायक श्री भगवानदास सबनानी, महापौर श्रीमती मालती राय, विधायक श्री रामेश्वर शर्मा, प्रदेश मंत्री श्री लोकेन्द्र पाराशर, श्री रजनीश अग्रवाल, श्री राहुल कोठारी, प्रदेश मीडिया प्रभारी श्री आशीष उषा अग्रवाल, विधायक श्री उमाकांत शर्मा, श्री विष्णु खत्री, श्री सुदेश राय, वरिष्ठ नेता श्री आलोक संजर, श्री शैलेन्द्र शर्मा, जिलाध्यक्ष श्री सुमित पचौरी, श्री जसवंत सिंह हाड़ा, पूर्व जिलाध्यक्ष श्री विकास विरानी, नगर निगम अध्यक्ष श्री किशन सूर्यवंशी, प्रदेश प्रवक्ता डॉ. हितेष वाजपेयी, श्री दुर्गेश केसवानी, श्री नरेन्द्र सलूजा, पेनालिस्ट श्री शिवम शुक्ला सहित प्रदेश व जिला पदाधिकारी, जनप्रतिनिधि एवं कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने बिटिया मुस्कान को दी बधाई

मध्यप्रदेश की बेटी मुस्कान ने माउंट किलिमंजारो पर फहराया तिरंगा

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने अशोकनगर की बिटिया मुस्कान रघुवंशी को अफ्रीकी महाद्वीप की सबसे ऊंची चोटी माउंट किलिमंजारो पर विजय प्राप्त करने के लिए बधाई दी है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि बिटिया मुस्कान ने माउंट किलिमंजारो पर तिरंगा ध्वज फहराकर मध्यप्रदेश सहित सम्पूर्ण देश को गौरवान्वित किया है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने बेटी मुस्कान को आशीर्वाद एवं शुभकामनाएं देते हुए उनके सुखद, सफल और उज्ज्वल भविष्य की कामना की है।

विस अध्यक्ष नरेन्द्र सिंह तोमर आज जयपुर जायेंगे

ग्वालियर। विधानसभा अध्यक्ष नरेन्द्र सिंह तोमर आज 01 दिसम्बर रविवार को प्रातः 11 बजे ग्वालियर से जयपुर के लिए प्रस्थान करेंगे। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विधानसभा अध्यक्ष श्री तोमर प्रातः 11 बजे ग्वालियर से सड़क मार्ग द्वारा जयपुर के लिए रवाना होंगे। वे मुरैना, धौलपुर, भरतपुर, दौसा होते हुए जयपुर जायेंगे। अपरान्ह 4 बजे श्री तोमर जयपुर पहुंचेंगे, जहाँ वे शाम 7:30 बजे भाजपा प्रदेश कार्यसमिति सदस्य रामकुमार माहेश्वरी के सुपुत्र के विवाह समारोह में शामिल होंगे। रात्रि 9:30 बजे ट्रेन द्वारा श्री तोमर जयपुर से भोपाल के लिए प्रस्थान करेंगे तथा 02 दिसम्बर को प्रातः 8:50 बजे भोपाल आयेंगे।

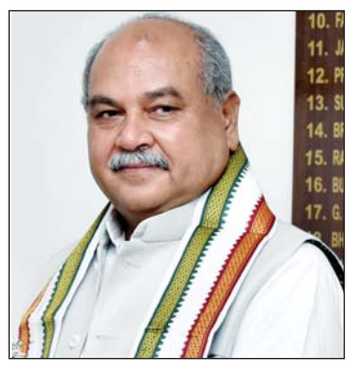

केन्द्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया ने मेडिकल कॉलेज का किया निरीक्षण

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

शिवपुरी। केन्द्रीय मंत्री श्रीमंत ज्योतिरादित्य सिंधिया ने शनिवार को राजमाता विजयाराजे सिंधिया मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल पहुंचकर प्रशासन के अधिकारियों के साथ निरीक्षण किया एवं जरूरी दिशा- निर्देश दिए।

इस दौरान शहर के प्रबुद्धजनों के साथ बैठक कर जिले की चिकित्सा व्यवस्थाओं को बेहतर बनाने के लिए सुझाव भी आमंत्रित किए गए। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि जनसहयोग के आधार पर एक उन्नत स्वास्थ्य व्यवस्था खड़ी करना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का विजन है कि देश के प्रत्येक नागरिक को उच्च स्तर की स्वास्थ्य सेवायें मिलें इसके लिए ही उन्होंने आयुष्मान कार्ड योजना प्रारंभ की है। इतना ही नहीं अब इस योजना के तहत 70 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धों को भी शामिल किया गया है ताकि उन्हें स्वास्थ्य सेवा का लाभ बहुत अच्छी तरह मिल सके। इस अवसर पर अनेक लोग मौजूद थे।

विस अध्यक्ष नरेन्द्र सिंह तोमर ने लड्ढा, भाजपा नेता मखीजानी एवं उमरैया के निवास स्थानों पर पहुंचकर शोक संवेदनायें प्रकट कीं

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

ग्वालियर। मध्य प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष एवं पूर्व केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री भारत सरकार नरेंद्र सिंह तोमर ने ग्वालियर प्रवास के दौरान मध्य प्रदेश चेंबर ऑफ कॉमर्स के पूर्व अध्यक्ष एवं समाजसेवी गोपाल दास लड्ढा की धर्मपत्नी स्व. श्रीमती मनोरमा लड्ढा के निधन पर उनके निवास स्थान सुरेश नगर थाटीपुर ग्वालियर व भारतीय जनता पार्टी महानगर ग्वालियर के पूर्व अध्यक्ष कमल माखीजानी कि सपुत्री श्रीमती कृतिका माखीजानी के निधन पर उनके निवास स्थान बालाबाई का बाजार लश्कर ग्वालियर एवं भारतीय जनता पार्टी महानगर ग्वालियर के पूर्व महामंत्री महेश उमरैया के बड़े भाई रामगोपाल उमरैया के निधन पर उनके निवास स्थान- सेवा नगर पार्क के पास ग्वालियर पहुंचकर शोक संवेदना व्यक्त कर पुष्पांजलि अर्पित की। विधानसभा अध्यक्ष नरेंद्र सिंह तोमर के साथ भाजपा प्रदेश कार्यसमिति सदस्य अशोक जैन, भाजपा पूर्व अध्यक्ष देवेश शर्मा, वरिष्ठ भाजपा नेता वेदप्रकाश शिवहरे, पूर्व पार्षद दिनेश दीक्षित ने भी पुष्पांजलि अर्पित की।

वरिष्ठ भाजपा नेता सुरेन्द्र शर्मा के पिताजी के निधन पर केन्द्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया ने शोक जताया

ग्वालियर। केन्द्रीय मंत्री श्रीमंत ज्योतिरादित्य सिंधिया ने गत दिवस मालनपुर में जिला उपाध्यक्ष, सुरेंद्र शर्मा के पिताजी के निधन उपरांत पुष्पांजलि अर्पित की और दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना की।

शिमला की संजौली मस्जिद की 3 मंजिलें गिरानी होंगी, डिस्ट्रिक कोर्ट ने 20 दिन की मोहलत दी

शिमला। शिमला स्थित संजौली मस्जिद की 3 अवैध मंजिलों को 20 दिन के अंदर गिराने का आदेश डिस्ट्रिक कोर्ट ने दिया है। शनिवार को कोर्ट ने ऑल हिमाचल मुस्लिम वेलफेयर एसोसिएशन की अर्जी को खारिज दिया, जिसमें नगर निगम कमिश्नर के आदेश को चुनौती दी गई थी।

एडिशनल डिस्ट्रिक्ट एंड सेशन जज प्रवीण गर्ग ने नगर निगम कमिश्नर के फैसले को सही ठराया। अब 20 दिसंबर तक मस्जिद की 3 मंजिलों को हटाना होगा। मस्जिद कमेटी अपने खर्चे पर तीनों मंजिल तुड़वाने का काम करेगी। हालांकि मस्जिद कमेटी अब तक छत और एक मंजिल की दीवारें हटा चुकी है। नगर निगम कमिश्नर ने 5 अक्टूबर को संजौली मस्जिद की अवैध रूप से बनी 3 मंजिलों को तोड़ने के आदेश दिए थे। इसके खिलाफ मुस्लिम पक्ष ने कोर्ट में दलील दी थी कि मोहम्मद लतीफ नाम का व्यक्ति ने मस्जिद गिराने की सहमति दी है, वह इसके लिए अधिकृत नहीं था।

जिला विकास समन्वय एवं निगरानी समिति (दिशा) की बैठक सम्पन्न

- शिवराज सिंह चौहान ने योजनाओं के क्रियान्वयन तथा विकास कार्यों की प्रगति की समीक्षा
- योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन से साकार होगी विकसित भारत की परिकल्पना: दर्शन सिंह चौधरी

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

रायसेन। जिला कलेक्टर कार्यालय सभाकक्ष रायसेन में शनिवार को जिला विकास समन्वय एवं निगरानी समिति (दिशा) की बैठक सम्पन्न हुई। बैठक की अध्यक्षता केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण तथा ग्रामीण विकास विभाग मंत्री शिवराजसिंह चौहान ने की सह अध्यक्षता होशंगाबाद नरसिंहपुर लोकसभा सांसद दर्शन सिंह चौधरी ने की इस अवसर पर प्रदेश के स्वास्थ्य राज्यमंत्री नरेंद्र पटेल पंचायत अध्यक्ष यशवंत मीणा, सांची विधायक डा. प्रभुराम चौधरी, भोजपुर विधायक सुरेंद्र पटवा, सिलवानी विधायक देवेंद्र पटेल की उपस्थिति रही। जिसमें कृषि मंत्री श्री चौहान द्वारा केंद्र सरकार की प्रधानमंत्री आवास योजना, जल जीवन मिशन, प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना, आयुष्मान भारत सहित अन्य योजनाओं के क्रियान्वयन तथा विकास कार्यों की प्रगति की समीक्षा की गई। बैठक में केंद्र सरकार की परियोजनाओं की समीक्षा की गई। बैठक के सह अध्यक्ष सांसद दर्शन सिंह चौधरी ने कहा कि विकसित भारत की परिकल्पना तब ही साकार हो सकती है जब सभी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन हो। बैठक में जिला कलेक्टर अरविंद दुबे, एसपी पंकज पांडे, जिला पंचायत सीईओ अंजू पवन भदौरिया सहित जिला अधिकारी उपस्थित हैं।

रायसेन में आयोजित हुआ 'लखपति दीदी सम्मेलन'

- केन्द्रीय मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने किया संवाद

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

रायसेन। वन परिसर में आयोजित 'लखपति दीदी सम्मेलन' में केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण तथा ग्रामीण विकास विभाग मंत्री शिवराज सिंह चौहान के साथ होशंगाबाद नरसिंहपुर लोकसभा सांसद दर्शन सिंह चौधरी शामिल हुए।

आयोजित सम्मलेन में केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने लखपति दीदियों से संवाद किया। गरीब महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के लिए केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा महिला स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से गांवों में तीन करोड़ 'लखपति दीदी' बनाने का लक्ष्य लेकर कार्य किया जा रहा है। इस योजना के माध्यम से स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी 3 करोड़ महिलाओं को स्वरोजगार शुरू करने के लिए 1-5 लाख रुपये तक की ब्याज मुक्त आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है। इसके तहत महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण भी दिया जाता है। जिसकी जानकारी लखपति दीदीयों से संवाद के माध्यम से केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण तथा ग्रामीण विकास विभाग मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने दी। इस अवसर पर कार्यक्रम में होशंगाबाद नरसिंहपुर लोकसभा सांसद दर्शन सिंह चौधरी सांची विधायक डॉ. प्रभुराम चौधरी, भोजपुर विधायक सुरेंद्र पटवा, पूर्व मंत्री रामपाल सिंह राजपूत, जिला कलेक्टर अरविंद दुबे, एसपी पंकज पांडे, जिला पंचायत सीईओ अंजू पवन भदौरिया, किसान मोर्चा कार्यालय मंत्री प्रयागराज रघुवंशी सहित बड़ी संख्या में लखपति दीदीयों की उपस्थिति रही।

सबको पक्का घर : पीएम जन-मन में 1.44 लाख से अधिक पीवीटीजी परिवारों के बन रहे पक्के घर

33 हजार 138 अतिरिक्त आवास भी मंजूर

भोपाल। केन्द्र सरकार द्वारा प्रधानमंत्री जनजातीय आदिवासी न्याय महाअभियान (पीएम जन-मन) के तहत प्रदेश की तीन विशेष पिछड़ी जनजातीय समूहों (पीवीटीजी) के सभी चिन्हित एवं पात्र परिवारों के पक्के घर तैयार किये जा रहे हैं। सबको पक्का घर देने के लक्ष्य के लिये प्रदेश के 24 जिलों में करीब 1 लाख 85 हजार 314 पीवीटीजी परिवार सर्वेक्षित किये गये हैं। इन सभी चिन्हित/पात्र परिवारों को पक्के घर बनाकर देने के लिये केन्द्र सरकार द्वारा पहले चरण में 1 लाख 44 हजार 200 पक्के घर मंजूर किये गये हैं। करीब 288 करोड़ 400 लाख रूपये की लागत से बनने वाले इन पक्के घरों का निर्माण कार्य दिसम्बर 2024 तक पूरा कर लेने का लक्ष्य रखा गया है। सितम्बर 2024 के अंत तक 36 हजार 720 से अधिक पक्के घर तैयार कर संबंधित पीवीटीजी हितग्राहियों को प्रदाय किये जा चुके हैं।

दूसरे चरण में इस महाअभियान में केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रदेश को 33 हजार 138 अतिरिक्त आवास मंजूर किये गये हैं। केन्द्रीय मंत्रालय द्वारा प्रदेश के 21 जिलों में निवासरत पीवीटीजी परिवारों को भी पक्के घर की सौगात देने के लिये यह विशेष मंजूरी दी गई है। केन्द्रीय मंत्रालय द्वारा प्रदेश के श्योपुर जिले को 7561, शिवपुरी को 5154, उमरिया को 4092, शहडोल 2591, अशोकनगर 2294, गुना 2084, सिंगरौली 1895, डिंडोरी 1532, अनूपपुर 1522, सीधी 1042, मंडला 903, मुरैना 695, विदिशा 448, बालाघाट 401, ग्वालियर 266, छिंदवाड़ा 202, नरसिंहपुर 158, सिवनी 117, दतिया 110, जबलपुर 42 एवं रायसेन जिले को 29 पीएम (पक्के) आवास मंजूर किये गये हैं।इस प्रकार दो किश्तों में मध्यप्रदेश को अब तक 1 लाख 77 हजार 338 पक्के घरों की मंजूरी मिल चुकी है। पीवीटीजी परिवारों के ये पक्के घर केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के निर्देशानुसार राज्य के पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा तैयार कराये जा रहे है और इन्हीं नवनिर्मित पक्के घरों में विद्युतिकरण का कार्य केन्द्रीय विद्युत मंत्रालय के तकनीकी मार्गदर्शन में प्रदेश के ऊर्जा विभाग द्वारा चरणबद्ध रूप से कराया जा रहा है।

पर्यटकों का स्वर्ग, भारत का आध्यात्मिक हृदय : मध्यप्रदेश

भोपाल। मध्यप्रदेश, जिसे ÷भारत का हृदय÷ कहा जाता है, धार्मिक और आध्यात्मिक विरासत का एक समृद्ध ताना-बाना है, जिसमें कई ऐसे स्थल हैं जो तीर्थयात्रियों और पर्यटकों को समान रूप से आकर्षित करते हैं। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव के दूरदर्शी नेतृत्व में, राज्य सरकार इन स्थलों को बढ़ाने और धार्मिक पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठा रही है, जो राज्य की सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्तमान सरकार की पहली वर्षगांठ, 13 दिसंबर के अवसर पर, सरकार मौजूदा धार्मिक स्थलों के जीर्णोद्धार और मध्यप्रदेश को धार्मिक पर्यटन के लिए एक प्रमुख केंद्र के रूप में स्थापित करने के लिए नए आध्यात्मिक स्थलों के विकास पर ध्यान केंद्रित कर रही है।

मध्यप्रदेश के विविध धार्मिक परिदृश्य में हिंदू, जैन, बौद्ध और इस्लाम सभी शामिल हैं, जो आध्यात्मिक साधकों के लिए एक महत्वपूर्ण गंतव्य है। हाल के वर्षों में मध्यप्रदेश में पर्यटकों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है, विशेष रूप से उज्जैन में ÷महाकाल महालोक÷ के सफल शुभारंभ के बाद। महाकाल महालोक में आगंतुकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है, जो आर्थिक विकास और सांस्कृतिक संरक्षण के उत्प्रेरक के रूप में धार्मिक पर्यटन की क्षमता को रेखांकित करता है।

डॉ. यादव के मार्गदर्शन में राज्य सरकार ने पूरे राज्य में महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों के जीर्णोद्धार और संवर्धन को प्राथमिकता दी है। इस पहल का उद्देश्य न केवल सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करना है, बल्कि आगंतुकों के अनुभव को बेहतर बनाना भी है। महाकाल महालोक इन प्रयासों का केंद्र बिंदु है, जिसे महाकालेश्वर मंदिर के आसपास एक जीवंत आध्यात्मिक केंद्र के रूप में विकसित किया गया है। यह पुनर्विकास प्रबंधन को बेहतर बनाता है और इस ऐतिहासिक स्थल के आध्यात्मिक वातावरण को समृद्ध करता है।

प्रदेश के अनेक धार्मिक स्थलों का उनकी परम्पराओं के अनुरूप विकास किया जा रहा हहै। सलकनपुर में देवी लोक को शक्ति मंदिर स्थल के रूप में विकसित किया गया है, ताकि सुगमता से देवी दर्शन के साथ ही तीर्थयात्रियों के लिए बेहतर पहुँच और सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जाएँ। छिंदवाड़ा में श्रीहनुमान लोक भगवान हनुमान का उत्सव मनाएगा, जिसमें भक्तों और पर्यटकों के लिए एक आकर्षक वातावरण बनाया जाएगा। ओरछा में रामराजा लोक भगवान राम का सम्मान करेगा और अध्यात्म और इतिहास दोनों में रुचि रखने वाले आगंतुकों को आकर्षित करेगा। सागर में संत रविदास लोक के पुनरुद्धार का उद्देश्य संत रविदास की विरासत का सम्मान करना है, ताकि उनके अनुयायियों और उनकी शिक्षाओं में रुचि रखने वाले पर्यटकों को आकर्षित किया जा सके।

जबलपुर में रानी दुर्गावती स्मारक और रानी अवंतीबाई स्मारक जैसे ऐतिहासिक स्थलों को भी उनके सांस्कृतिक महत्व को उजागर करते हुए बढ़ाया जा रहा है, साथ ही इतिहास और अध्यात्म दोनों में रुचि रखने वाले आगंतुकों का भी ध्यान रखा जा रहा है। इसके अलावा, अमरकंटक में माँ नर्मदा महालोक में आगंतुकों की सुविधाओं को बढ़ाने और इसकी प्राकृतिक सुंदरता को बढ़ावा देने के लिए सुधार किए जा रहे हैं। सरकार खरगोन में देवी अहिल्याबाई लोक, बड़वानी जिले में नागलवाड़ी लोक जैसे नए आध्यात्मिक स्थलों को विकसित करने पर भी ध्यान केंद्रित कर रही है, जिसमें शांत वातावरण बनाने पर जोर दिया जा रहा है।

ग्वालियर में जाम सावंली हनुमान लोक में भगवान हनुमान की शक्ति और भक्ति का पर्व मनाया जाएगा, वहीं जानापाव जिसे भगवान परशुराम की जन्म स्थली के रूप में जाना जाता है, वहां परशुराम लोक विकसित किया जाएगा, जिसमें भगवान परशुराम को समर्पित एक नया मंदिर बनाया जाएगा, जहां आगंतुकों के लिए विभिन्न सुविधाएँ भी होंगी। इस परियोजना में नर्मदा जल को लाना और आसान पहुँच के लिए रोपवे का निर्माण करना भी शामिल है। दतिया में मां पीतांबरा लोक, देवी पीतांबरा को समर्पित एक और महत्वपूर्ण स्थल है। रतनगढ़ में माता मंदिर लोक देवी दुर्गा को समर्पित एक प्रतिष्ठित मंदिर के साथ एक प्रमुख धार्मिक पर्यटन स्थल भी बन जाएगा।

अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन की संभावनाओं को पहचानते हुए, मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड विदेशों से पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए वैश्विक बाजारों के साथ सक्रिय रूप से जुड़ रहा है। स्थानीय जनजातियों के लिए सब्सिडी के साथ ग्रामीण होम-स्टे को बढ़ावा देने जैसी पहल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों के लिए सुरक्षा बढ़ाने के साथ-साथ उन्हें अच्छे आवास का अनुभव भी प्रदान करती है।

मध्यप्रदेश द्वारा पर्यटन के क्षेत्र में किए गये ये नवाचार जैसे-जैसे समय के साथ आगे बढ़ते हैं, वे न केवल पर्यटन में वृद्धि के माध्यम से आर्थिक विकास का वादा करते हैं, बल्कि भारत की विविध धार्मिक परंपराओं के बीच शांति की तलाश करने वाले आगंतुकों के लिए एक समृद्ध आध्यात्मिक अनुभव भी प्रदान करते हैं। इसमें सरकार की प्रतिबद्धता इस समझ को रेखांकित करती है कि धार्मिक पर्यटन को बढ़ावा देने से मध्यप्रदेश में सांस्कृतिक संरक्षण और सामुदायिक विकास दोनों में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

मध्यप्रदेश सरकार ÷वृंदावन ग्राम योजना÷ भी प्रारंभ करने जा रही है, जिसके अंतर्गत चयनित ग्राम पंचायतों को ग्रामीण विकास में बढ़ावा देने वाले आदर्श गांवों में बदला जायेगा है। प्रत्येक चयनित गांव में स्थानीय डेयरी उत्पादन को बढ़ावा देते हुए गायों की सुरक्षा के लिए गौशालाएँ बनाई जाएँगी। शहरी मध्यप्रदेश के आध्यात्मिक परिदृश्य को और समृद्ध बनाने के लिए, सभी शहरी निकायों में गीता भवन केंद्र स्थापित किए जा रहे हैं। ये केंद्र भगवदगीता और अन्य शास्त्रों की शिक्षाओं को फैलाने पर ध्यान केंद्रित करेंगे, साथ ही आध्यात्मिक शिक्षाओं से संबंधित साहित्य तक पहुँच प्रदान करेंगे। लगभग 100 पर्यटन परियोजनाओं में सरकार का लगभग 2,200 करोड़ का निवेश होगा, जो मध्यप्रदेश की धार्मिक पर्यटन को बढ़ाने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

पुलिस महानिदेशक सक्सेना को भावभीनी विदाई

भोपाल, 30 नवम्बर 2024/ पुलिस महानिदेशक श्री सुधीर सक्सेना के सेवानिवृत्ति के अवसर पर विदाई परेड का आयोजन मोतीलाल नेहरू पुलिस स्टेडियम भोपाल में किया गया। परेड से पहले पुलिस महानिदेशक श्री सक्सेना ने शहीद स्मारक पर पुष्पांजलि अर्पित की।

विदाई परेड में परेड कमाण्डर की जिम्मेदारीभापुसे सुश्री सोनाक्षी सक्सेना डीसीपी इंटेलिजेंस भोपाल तथा परेड टूआईसी सहायक सेनानी श्री रवि शर्मा के नेतृत्व में आठ प्लाटून तथा पुलिस बैण्ड दल द्वारा परेड की गई।पुलिस महानिदेशक श्री सक्सेना द्वारा परेड का निरीक्षण किया गया उसके बाद आकर्षक मार्च पास्ट हुआ।

सेवानिवृत्ति के अवसर पर अपने संबोधन में श्री सुधीर सक्सेना ने कहा कि एक अत्यंत भव्य परेड़ का आज आपने प्रदर्शन किया है। इसके लिये मैं आप सभी को बहुत बहुत बधाई देता हूं। आपके इस प्रदर्शन के लिए मैं एडीजी एसएएफ तथा उनकी पूरी टीम को भी धन्यवाद देता हूँ, जिनके अथक परिश्रम एवं समर्पण के फलस्वरूप आपके उच्च कोटि के प्रदर्शन के हम सभी साक्षी बने हैं।उन्होंने कहा कि सर्वप्रथम मैं मध्यप्रदेश पुलिस शहीदों को श्रद्धांजलि देते हुए हृदय की गहराईयों से उनका स्मरण करता हूं। इन शहीदों के आत्मदान की नींव पर ही मध्यप्रदेश पुलिस की गौरवशाली इमारत खड़ी हुई है। समस्त शहीदों और उनके महान परिजनों के बलिदान के प्रति मैं अपना विनम्र अभिवादन प्रस्तुत करता हूं।

मध्यप्रदेश पुलिस का एक अत्यंत ही गौरवशाली इतिहास रहा है। आजादी के समय जम्मू कश्मीर में कबाईली हमलों से मुकाबला करने में, हैदराबाद में ऑपरेशन पोलो में, दक्षिण के भाषाई आंदोलन में, गोआ के स्वतंत्रता संग्राम में, नार्थ ईस्ट में नागालैंड व त्रिपूरा में, पंजाब व जम्मू कश्मीर के आतंकवाद में सभी स्थानों पर मध्यप्रदेश पुलिस के जाबांज जवानों व अधिकारियों ने देश की आंतरिक सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

श्री सक्सेना ने कहा कि मध्यप्रदेश पुलिस में अपनी सेवा यात्रा को याद करते हुए मैं गर्व और संतोष का अनुभव कर रहा हूं। यह एक ऐसी यात्रा रही, जिसमें चुनौतियां थीं, कठिनाइयां थीं, लेकिन उससे भी कहीं अधिक सीखने, सहयोग करने और जनसाधारण की सेवा करने के लिए योगदान देने के अवसर थे।

उन्होने कहा कि आज का यह विशेष दिन मेरे लिए भावनाओं से भरा हुआ है। एक ओर, मध्यप्रदेश पुलिस परिवार के साथ बिताए गए अनमोल पलों की स्मृतियां हैं, वहीं दूसरी ओर, इस महान सेवा से विदा लेने का क्षण। मैं इस विदाई समारोह के आयोजन और आप सभी की उपस्थिति के लिए हृदय से आभार व्यक्त करता हूं।

मध्यप्रदेश पुलिस के महानिदेशक के रूप में लगभग पौने तीन साल के कार्यकाल में पूरे पुलिस बल ने जो आत्मीयता, सहयोग व सम्मान मुझे दिया वह मेरे लिये एक धरोहर है और सदैव अविस्मरणीय रहेगा। चाहे पुलिस मुख्यालय की विभिन्न शाखाओं के अतिरिक्त पुलिस महानिदेशकगण व उनके अधिनस्थ अधिकारी व कर्मचारी हों या विभिन्न मैदानी इकाईयों के अधिकारी व कर्मचारी हों, सभी ने पूर्ण समर्पण व कर्तव्य निष्ठा से कार्य करते हुये प्रदेश में कानून व्यवस्था बनाये रखने में उल्लेखनीय कार्य किया व सफलता के कई प्रतिमान स्थापित किये।

मैने प्रदेश व देश में अनेक स्थानों पर विभिन्न पदों पर अपनी सेवायें दी हैं किन्तु मैं पूरी जिम्मेंदारी से यह कहने का सौभाग्य मानता हूं कि मध्यप्रदेश पुलिस सर्वोत्तम है। मध्यप्रदेश पुलिस की कर्मठता, लगन, निष्ठा, ईमानदारी और अनुशासन को मैं नमन करता हूं।

विधान सभा चुनाव, लोक सभा चुनाव, पंचायत व नगरीय निकायों के चुनाव तथा कई उपचुनाव को स्वतंत्र निष्पक्ष व शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न कराना एक बहुत बड़ी चुनौती थी, जिसका आप सभी लोगों ने बहुत सफलतापूर्वक सामना किया एवं आपके द्वारा जिस कुशलता से इस जिम्मेदारी का निर्वहन किया गया उसकी चुनाव आयोग सहित सभी ओर सराहना की गई। ग्वालियर चम्बल जैसे चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में बिना किसी घटना के चुनाव संपन्न हो जाना एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपलब्धि रही।प्रदेश में विभिन्न प्रकार के धार्मिक आयोजन व पर्व लगातार हुए जिनमें लाखों श्रद्धालूओं ने पूरे उत्साह से भाग लिया। प्रदेश का एक बड़ा हिस्सा इन आयोजनों के दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील रहता है, लेकिन इन सभी आयोजनों व पर्वों को पूर्ण सांप्रदायिक सद्भाव के साथ संपन्न कराने का कार्य सभी मैदानी इकाईयों द्वारा अत्यंत कुशलता से किया गया।

अतिविशिष्ट व्यक्तियों का भ्रमण एक ऐसी जिम्मेदारी होती है, जिसमें यदि थोड़ी सी भी कमी रह जाये तो उसके अत्यंत गंभीर परिणाम हो सकते हैं। पिछले 2 वर्षों में माननीय प्रधानमंत्री जी के ही लगभग 40 से अधिक स्थानों पर भ्रमण हुये। साथ ही माननीय राष्ट्रपति जी, माननीय केन्द्रीय गृह मंत्री जी तथा कई अन्य अतिविशिष्ट व्यक्तियों के भ्रमण हुये लेकिन मध्यप्रदेश पुलिस द्वारा समुचित व फुलप्रूफ सुरक्षा व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना आपकी व्यवसायिक योग्यता का उत्कृष्ट प्रमाण है।

यह संतोष की बात है कि आप लोगों के प्रयासों से मध्यप्रदेश में अपराधों की स्थिति पूरी तरह नियंत्रण में है। एक ओर जहां विभिन्न प्रकार के गंभीर अपराधों में, महिलाओं के विरूद्ध अपराधों में तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के विरूद्ध अपराधों में कमी परिलक्षित हो रही है, वहीं दूसरी ओर सभी सनसनीखेज अपराधों को डिटेक्ट करते हुये अपराधियों की त्वरित गिरफ्तारी सुनिश्चित की गई है।

पिछले कुछ वर्षों में नक्सलवाद के विरूद्ध मध्यप्रदेश पुलिस ने अभूतपूर्व सफलतायें प्राप्त की हैं। पिछले लगभग ढाई वर्षों में पुलिस मुठभेड़ में मारे गये नक्सलियों की संख्या, उससे पिछले 25 वर्ष में धराशायी किये गये नक्सलियों की कुल संख्या से अधिक है। इन पर लगभग 3 करोड़ रूपये से अधिक का इनाम था। पहली बार मध्यप्रदेश पुलिस ने डिवीजनल कमेटी स्तर के नक्सलियों को धराशायी किया गया तथा पहली बार एके-47 जैसे हथियार बरामद किये गये।

कई इनामी नक्सलियों को भी गिरफ्तार भी किया गया।

नक्सलियों की अवैध वसूली पर भी प्रभावी रोक लगाई गई। हमारे प्रयासों से हाक फोर्स के लिये जो विशेष भत्ता राज्य शासन ने स्वीकृत किया उससे हाक फोर्स के मनोबल में आशातीत वृद्धि हुई। साथ ही नक्सल मुठभेड़ों में जांबाज प्रदर्शन करने के फलस्वरूप लगभग 262 जवानों को कम से पूर्व पदोन्नति दी गई।

एनीमिया और हिडन हंगर पर नीति संवाद, मध्यप्रदेश की अलग रणनीति

एनीमिया को समग्र रूप से दूर करने के लिये विभागों के बीच होगा समन्वय

भोपाल। नीति आयोग की कार्यशाला में विशेषज्ञों ने कहा है कि मध्यप्रदेश में एनीमिया के उन्मूलन के लिये सभी सम्बद्ध विभागों के बीच बेहतर समन्वय आवश्यक है। मध्यप्रदेश में एनीमिया और हिडन हंगर की स्थिति पर राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस) से जानकारी साझा की गई। नीति आयोग द्वारा एनीमिया और हिडन हंगर पर विशेषज्ञों ने गत दिवस एक कार्यक्रम में मध्यप्रदेश के संदर्भ में व्यापक चर्चा की।

आयुक्त खाद्य, श्री सिवि चक्रवर्ती ने राज्य के फोर्टिफाइड चावल कार्यक्रम और एनीमिया से जुड़े महिला कार्यबल की कम भागीदारी को एक बड़ी चुनौती के रूप में रेखांकित किया। उन्होंने कार्यबल पर एनीमिया के प्रभाव का आंकलन करने और डेटा का उपयोग करके प्रभावी रणनीतियाँ तैयार करने का सुझाव दिया। संयुक्त नियंत्रक खाद्य एवं औषधि प्रशासन श्रीमती माया अवस्थी ने हिडन हंगर और राज्य में फोर्टिफिकेशन प्रयासों, विशेष रूप से सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के माध्यम से डबल-फोर्टिफाइड नमक के वितरण पर विस्तार से चर्चा की। उन्होंने एनीमिया को समाप्त करने के लिए विभागों के बीच समन्वय के महत्व को रेखांकित किया।

एफएसएसएआई के डॉ. अमित शर्मा ने सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने वाले नियामक ढांचे पर चर्चा की, जिसमें खाद्य सुरक्षा और फोर्टिफिकेशन मानकों के लिए अधिदेश पर ध्यान केंद्रित किया गया। श्री मुदित कपूर ने मध्यप्रदेश में घरेलू आहार प्रवृत्तियों पर डेटा प्रस्तुत किया, जिसमें क्षेत्रीय विविधताओं, आहार विविधता में सुधार और अनाज की खपत में गिरावट को रेखांकित किया गया। उन्होंने शहरी क्षेत्रों में बेहतर गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों की ओर बदलाव की जानकारी दी।

बिल एंड मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन की सुश्री रुचिका चुघ सचदेवा ने कुपोषण को दूर करने के लिए वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं को साझा किया और फोलिक एसिड फोर्टिफिकेशन और आहार विविधता रणनीतियों पर जोर दिया। साथ ही न्यूट्रिशन इंटरनेशनल की सुश्री साक्षी जैन और फोर्टिफाई हेल्थ की डॉ. जोशिता लांबा ने राज्य में क्षमता निर्माण, तकनीकी सहायता और जन-जागरूकता अभियानों पर प्रकाश डाला।

डॉ. अभिजीत पी. पाखरे और श्रीमती अमिता सिंह ने खाद्य फोर्टिफिकेशन कार्यक्रमों के त्वरित और साक्ष्य-आधारित कार्यान्वयन की आवश्यकता को रेखांकित किया। उन्होंने एनीमिया उन्मूलन के लिए डेटा उत्पन्न करने और नीतियों को मजबूत करने पर जोर दिया।

बैठक में नीति आयोग के डॉ. धापानी ने स्वागत उद्बोधन दिया, जिसमें उन्होंने मध्यप्रदेश में एनीमिया और हिडन हंगर की स्थिति पर जानकारियाँ साझा कीं। उन्होंने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच के अंतर पर प्रकाश डाला और पोषण निगरानी और हस्तक्षेप को मजबूत करने की आवश्यकता पर बल दिया। श्रीमती पूर्णिमा शर्मा ने सभी का आभार माना।

खाद्य विभाग के अधिकारियों ने सीखे आनंद के तरीके

भोपाल। खाद्य, नागरिक आपूर्ति एवं उपभोक्ता संरक्षण और वेयर हाउसिंग के अधिकारियों ने 28 से 30 नवंबर तक वाल्मी भवन में आनंद संस्थान के प्रशिक्षकों से आनंदित रहने के तरीके सीखे। प्रशिक्षण में ÷स्वयं की स्वयं से मुलाकात÷, ÷पॉवर ऑफ साइलेंस÷ का अनुभव एवं जीवन को आनंददायक बनाने के तरीकों को सिखाया गया। समापन सत्र में प्रमुख सचिव खाद्य, नागरिक आपूर्ति एवं उपभोक्ता संरक्षण श्रीमती रश्मि अरूण शमी और आनंद संस्थान के निदेशक श्री प्रवीण गंगराड़े भी शामिल हुए।

प्रशिक्षण में लगभग 50 अधिकारी-कर्मचारी शामिल हुए। प्रशिक्षण श्री रामसहाय यादव, श्रीमती अर्चना शर्मा, श्रीमती अंजना श्रीवास्तव, श्री मुकेश कामले और श्री कमलकान्त द्वारा दिया गया।

... शेष पृष्ठ एक का

विकास के लिये केवल सरकार पर निर्भर न रहें: न्यायमूर्ति श्री माहेश्वरी

पहाड़ी को वनीकरण के लिये तैयार करने में शहर का हरा व गीला कचरा, जलकुंभी, राख, पराली, भूसा, गौमूत्र व गोबर इत्यादि का इस्तेमाल किया गया है। हरि पर्वत को देश भर में वनीकरण के लिये विख्यात 'राम आस्था मिशन' के सहयोग से अर्बन वन के रूप में विकसित किया जा रहा है। यह संस्था देश में अब तक 917 सफल वृक्षारोपण प्रोजेक्ट पूरे कर चुकी है।

इस अवसर पर मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय जबलपुर के प्रशासनिक न्यायाधिपति श्री संजीव सचदेवा, उच्च न्यायालय जबलपुर के न्यायमूर्ति श्री एसए धर्माधिकारी, उच्च न्यायालय खण्डपीठ ग्वालियर के प्रशासनिक न्यायाधिपति श्री आनंद पाठक व उच्च न्यायालय ग्वालियर के रजिस्ट्रार धरमिंदर सिंह ने 'हरि पर्वत' के 'हरि आनंद वन' में विभिन्न प्रजातियों के पौधे रोपे। इस अवसर पर 'हरि पर्वत' के पोस्टर का विमोचन भी न्यायमूर्तिगणों द्वारा किया गया। शुभारंभ अवसर पर कलेक्टर श्रीमती रुचिका चौहान, पुलिस अधीक्षक धर्मवीर सिंह, निगम आयुक्त अमन वैष्णव, वन मण्डाधिकारी अंकित पाण्डेय, अपर कलेक्टर कुमार सत्यम व टीएन सिंह मौजूद थे।

बाक्स

न्यायमूर्ति की पहल से प्रेरित होकर विकसित हो रहा है 'हरि पर्वत' उपवन

उच्च न्यायालय खण्डपीठ ग्वालियर के प्रशासनिक न्यायाधिपति श्री आनंद पाठक की पहल पर सिरोल पहाड़ी पर हुए वृहद एवं सफल वृक्षारोपण से प्रेरित होकर जिला प्रशासन द्वारा साझा प्रयासों से अलापुर पहाड़ी पर 'हरि पर्वत' के नाम से सिटी फोरेस्ट विकसित करने की यह परियोजना शुरू की गई है। ज्ञात हो उच्च न्यायालय खण्डपीठ ग्वालियर के प्रशासनिक न्यायाधिपति श्री आनंद पाठक द्वारा समय-समय दिए गए विभिन्न न्यायिक आदेशों के माध्यम से सिरोल पहाड़ी पर वृहद स्तर पर सफल वृक्षारोपण हुआ है। इससे सिरोल पहाड़ी ने हरीतिमा की चादर ओढ़ ली है। न्यायमूर्ति श्री पाठक की यह पहल पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में अनुकरणीय उदाहरण बनी हैं।

बाक्स

लगभग 6 हजार पौधे रोपकर हरि पर्वत को ओढ़ाई जायेगी हरीतिमा की चादर

कलेक्टर श्रीमती चौहान ने बताया कि हरि पर्वत पर दो चरणों में कुल मिलाकर 6 हजार पौधे रोपे जायेंगे। प्रथम चरण में 5 एकड़ में लगभग 2 हजार और द्वितीय चरण में लगभग 10 एकड़ इलाके में 6 हजार पौधे रोपने का कार्यक्रम बनाया गया है। यह परियोजना 18 माह में पूर्ण होगी। सुबह की सैर पर आने वाले लोगों के लिये हरि पर्वत पर पाथवे बनाए जा रहे हैं। साथ ही आगे चलकर योगा स्थल भी यहां पर स्थापित किया जायेगा। लगाए गए सभी पौधे पेड़ बन सकें, इसकी जिम्मेदारी राम आस्था मिशन ने ली है। पौधों की सिंचाई के लिये पाइपलाइन डाली जा रही हैं। साथ ही स्प्रिंकलर पद्धति से भी सिंचाई कराई जायेगी। कलेक्टर श्रीमती चौहान ने बताया कि हरि पर्वत पर समय-समय पर विशिष्ट एवं अतिविशिष्ट व्यक्तियों एवं गणमान्य नागरिकों के माध्यम से सामूहिक वृक्षारोपण कार्यक्रम कराए जायेंगे।

करोड़ों के पीएचई घोटाले की जांच पुलिस या ईओडब्ल्यू करेगी, फैसला जल्द

- पीएचई के दो अधिकारियों के नाम और सामने आये

ग्वालियर। पीएचई घोटाले में निगम के पूर्व और वर्तमान दो अधिकारियों के नाम सामने आये है। इनके कार्यकाल के दौरान भी मनमाने ढंग से सामान की खरीद फरोख्त का रिकार्ड पुलिस की क्राइम ब्रांच को मिला है। इस आधार पर इन अधिकारियों के कार्यकाल की जांच भी पुलिस ने शुरू कर दी है। इस संबंध में विस्तृत जानकारी पत्र के माध्यम से पीएचई विभाग के मुख्य अभियंता कार्यालय से मांगी गई है। पिछले वर्ष नगर निगम पीएचई के खंड क्रमांक 1 में मनमाने ढंग से भुगतान की गड़बड़ी मिलने के बाद पुलिस की क्राइम ब्रांच ने एफआईआर दर्ज की थी। इसमे कार्यपालन यंत्री संजय सोलंकी आरएन करैया को गिरफ्तार करते हुये जेल भेज दिया गया है। अधीक्षण यंत्री विनोद छारी व जागेश श्रीवास्तव अभी तक फरार चल रहे है। इनके साथ लिपिक हीरालाल, राहुल व एक अन्य कर्मचारी भी गिरफ्तार किये गये है।

हीरालाल ने अपने परिचित राहुल के माध्यम से 27 अलग अलग फर्मों के नाम पर सामान खरीदना दिखाया और भुगतान अपनी पसंद के 74 लोगों के खातों में भेजा गया। शुरूआती जांच में यह रकम 18 करोड़ सामने आई थी। विस्तृत जांच में यह आंकड़ा 84 करोड़ को पार कर चुका है। डेढ़ साल से इसकी जांच जारी है। कार्यपालन यंत्री सोलंकी व करैया के साथ लिपिक हीरालाल व ठेकेदार राहुल जेल में बंद है। विस्तृत जांच में पुलिस को यह पता लगा है कि इस घोटाले में वर्ष 2017 से 2023 के अलावा 2017 से पहले के दो अन्य अधिकारी भी शामिल रहे हैं। इनमें से एक अधिकारी वर्तमान में मुरैना में पीएचई विभाग में पदस्थ है। इनके कार्यकाल के भुगतान की जानकारी भी पुलिस ने विभाग से मांगी है। साथ ही दूसरे अधिकारी वर्तमान में नगर निगम में कार्यपालन यंत्री के पद पर पदस्थ है। इनके बारे में भी पुलिस ने विभाग से जानकारी मांगी है। वर्ष 2023 जुलाई में सामने आये इस घोटाले में अभी तक 74 लोगों के खिलाफएफआईआर दर्ज की जा चुकी है। इनके खातों में 84 करोड़ की रकम भेजी गई है। इस रकम से लिपिक हीरालाल ने गिरवाई क्षेत्र में 5 करोड़ की जमीन व होटल खरीदा है। जेल में बंद अधिकारी ने अपने परिजन के खाते में 65 लाख रूपये ठेकेदार से ट्रांसफर करवाये है। जिन दोनों नये अधिकारियों के नाम पुलिस की जांच में आये हैं उनका ग्वालियर व मुरैना में पदस्थापना के दौरान कार्यशैली विवादित रही है।

इनका कहना है

पीएचई घोटाले में आरोपियों की संख्या व खातों की संख्या अधिक होने की वजह से सीआईडी या ईओडब्ल्यू जैसी जांच एजेंसी से विस्तृत जांच के लिये पत्र शासन को भेजा गया है। इस घोटाले में राशि का ट्रांसफर कई खातों में हुआ है। जांच में नये नाम व नई जानकारियां लगातार सामने आ रही है। विस्तृत जांच के लिये शासन स्तर पर पत्र भेजा गया है।

धर्मवीर सिंह
पुलिस अधीक्षक

ऑपरेशन मुस्कान ने परिवारों में लौटाई मुस्कान

- 385 में से 317 बच्चे किये बरामद

ग्वालियर। ग्वालियर पुलिस का ऑपरेशन मुस्कान अब उन परिवारों को मुस्कान लौटा रहा है जिनके बच्चे लापता हो गये थे। ग्वालियर पुलिस के आपरेशन मुस्कान में ग्यारह माह में 385 बच्चों की तलाश शुरू की और इनमें से 317 बच्चों को बरामद कर उनके परिजनों के सुपुर्द कर दिया। इससे उन परिवारों में तो मुस्कान लौट आई जिनके बच्चे घर वापस पहुंच गए। इस आपरेशन में एक चौंकाने वाली बात सामने आई कि नाबालिग बच्चे घर से भागने में माहिर होते जा रहे हैं। पिछले 11 माह में जिन 385 बच्चों ने घर छोड़ा उनमें सबसे ज्यादा संख्या 15 से साढ़े सत्रह उम्र के बच्चे है।

इन बच्चों को पुलिस तलाश कर तो ले आई पर जब इनसे पूछताछ की गई तो हैरान करने वाली बात यह भी सामने आई है कि आजकल के बच्चों को माता-पिता की डांट सहन नहीं हो रही है। यह हाल तो नाबालिग बच्चों का कहना है। माता-पिता ने बच्चों को डांटा नहीं कि वे घर से भागने जैसा कदम तक उठा लेते हैं। पुलिस ने जब बरामद किये हुये बच्चों से पूछा कि घर से भागने के बाद भविष्य में क्या करते तो इनका जवाब था कि यह तो सोचा ही नहीं था। घर से भागने वाले बच्चों में ज्यादातर सोशल मीडिया की लत से ग्रसित मिले। किसी को फेसबुक से चिपके रहने की आदत के कारण पढ़ाई में रुचि कम हो रही थी तो किसी को रील बनाने का चस्का घर से भगा लिया। लड़के - लड़कियों के कम उम्र के अफेयर भी घर से भागने की एक मुख्य वजह सामने आई है। बच्चों को तलाश करने में पुलिस को कई पापड़ बेलने पड़ते हैं। सबसे पहले तो यदि घर छोडने वाला नाबालिग है तो तुरंत केस दर्ज करो। एक टीम बनाओ। भागने वाली यदि लड़की है तो टीम में महिला सब इंस्पेक्टर का होना जरूरी है और फिर यह टीम लोकेशन के आधार पर पूरा देश छानने निकल पड़ती है। यह टीम बच्चों को बरामद करके लाती है तो यह बात भी सामने आती है कि जो रिपोर्ट लिखवाई गई वह तो झूठी है। इस मामले में पुलिस कप्तान धर्मवीर सिंह का कहना है कि परिवारों को चाहिए बच्चों को ज्यादा से ज्यादा समय दें। उनकी दिनचर्या पर नजर रखें। काउंसलिंग भी करते रहें। उन्होंने कहा कि एक जनवरी 2024 से 30 नवंबर तक ग्वालियर में 385 बच्चों के अपहरण की सूचना मिली। इसमें पुलिस 317 बच्चों को वापस ला चुकी है। पुलिस कप्तान धर्मवीर सिंह ने बताया कि बच्चों की तलाश में पुलिस टीम अंडमान से लेकर कश्मीर, मुंबई से कन्याकुमारी तक की दूरी नाप चुकी है। उन्होंने कहा कि साल 2023 के अंत कर 146 बच्चे लापता था उनमें से भी 59 बच्चों को इस साल हमारी पुलिस टीम ने दस्तयाब किया है।

बदमाशों ने टायर किया पंचर, 10 लाख के गहने ले उड़े

ग्वालियर। पत्नी बच्चों के साथ खरीददारी करने आए कारोबारी की कार को पंचर कर बदमाशों ने जेवरों से भरा बैग पार कर दिया। घटना पड़ाव थाना क्षेत्र के डीबी मॉल के पास की है। घटना का पता उस समय चला जब ड्राइवर कार का टायर चेक कर वापस आया तो बैग गायब था। मामले की सूचना पुलिस को दी। सूचना मिलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच पड़ताल शुरू कर दी है। राम तलाई मंदिर के पास श्योपुर निवासी 37 वर्षीय मयंक पुत्र अनिल गोयल कारोबारी है और उनका इलेक्ट्रिक ट्रांसफार्मर सप्लाई का काम है। बीते रोज वह पत्नी और बच्चों के साथ खरीददारी करने के लिए अपनी सेल्टोस कार क्रमांक एमपी31जेडबी 2112 से डीबी मॉल आए थे। मॉल पर पहुंचने पर ड्राइवर को कार में छोड़कर वह खरीददारी करने के लिए चले गए। कुछ देर बाद ड्राइवर का कॉल आया और बताया कि कार से जेवर से भरा बैग चोरी हो गया। बैग चोरी होने का पता चलते ही वह बाहर आए और ड्राइवर से जानकारी लेने के बाद पुलिस को सूचना दी। सूचना मिलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद मामला दर्ज कर लिया है। ड्राइवर ने कारोबारी व पुलिस को बताया कि वह कार में बैठकर मालिक के वापस आने का इंतजार कर रहा था, तभी अचानक टायर फटने की तेज आवाज आई। ड्राइवर ने कार से उतर कर देखा तब पता चला कि पिछले पहिए का एक टायर फट गया है। वह टायर चेक कर रहा था कि इसी बीच अज्ञात चोर ने उनकी कार में रखा जेवर से भरा बैग गायब कर दिया। संभवतः वारदात को अंजाम देने वाले बदमाशों ने ही कार का टायर पंचर किया था। पीडित ने बताया कि कार में दो हैंड बैग रखे थे, जिसमें एक बड़े बैग में सोने के एक जोडी कंगन, एक चेन व पेंडल, दो झुमकी, दो हार एवं अन्य सामान रखा था। दूसरे छोटे बैग में घरेलू सामान था। चोरों का पता लगाने के लिए पुलिस अब आस-पास लगे सीसीटीवी कैमरे खंगाल रही है, जिससे चोरों का पता लगाया जा सके। कुछ सीसीटीवी में धुंधले फुटेज मिले हैं। पुलिस फुटेजों के आधार पर बदमाशो की तलाश कर रही है।

प्लास्टिक उत्पादों के प्रदर्शन व भविष्य खोजने के लिये ग्वालियर में रोडशो

- नई साल में होगा सम्मेलन

ग्वालियर। प्लास्टिक उद्योग सम्मेलन प्लास्टपैक 2025 के लिये इंदौर में 9 से 12 जनवरी तक एक कार्यक्रम किया जायेगा। जिसकी प्रदेशभर में तैयारियां शुरू हो गई है। प्लास्टपैक 2025 सम्मेलन के लिये ग्वालियर में भी रोडशो का आयोजन किया गया है। वहीं सभी उद्योगपति एवं अधिकारियों को इंदौर सम्मेलन के लिये आमंत्रित किया गया है। यह बात प्लास्टपैक सम्मेलन के संयोजक व प्रतिनिधि संदीप ठाकुर, विशाल जोशी एवं दिवेश गोयल ने शनिवार को संयुक्त रूप से पत्रकारों को जानकारी देते हुये कही।

उद्योगपति श्री जोशी व श्री गोयल ने पत्रकारों को बताया कि चार दिवसीय प्लास्टपैक 2025 सम्मेलन में कंपनियों के इनोवेटिव उत्पादों का प्रदर्शन किया जायेगा। साथ ही प्लास्टिक व पर्यावरण पर परिचर्चा भी आयोजित की जायेगी। यह सम्मेलन इंदौर के लाभगंगा एक्जीबिशन सेंटर पर आयोजित किया गया है। इस उपलक्ष्य में देशभर के प्रमुख शहरों में रोडशो किया जा रहा है। इसी क्रम में शनिवार को ग्वालियर में भी रोडशो किया गया है। अब तक 200 लोगों ने पंजीयन करा दिये हैं। संभवतः 400 से अधिक कंपनियां इस सम्मेलन में भाग लेंगी। इसके साथ ही उद्योग विभाग, एमपीआईडीसी, बिजली विभाग, टेक्नोलाजी विभाग तथा निगम के अधिकारी भी विशेष सत्र में भागीदारी करेंगे।

कांग्रेस साधारण सभा की बैठक आज

ग्वालियर। वार्ड 39 के नगर निगम पार्षद उपचुनाव में कांग्रेस की जीत सुनिश्चित करने एवं जनता के हितों के मुद्दों को लेकर शहर कांग्रेस द्वारा आगामी दिनों में किए जाने वाले धरने, प्रदर्शन, आंदोलन, कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करने के लिए आज 1 दिसंबर को दोपहर 3 बजे कांग्रेस भवन शिंदे की छावनी पर कांग्रेस साधारण सभा की बैठक आयोजित की गई है। शहर कांग्रेस अध्यक्ष डॉ. देवेन्द्र शर्मा ने कहा कि बैठक में विधायक, पूर्व विधायक, पूर्व अध्यक्ष, प्रदेश कांग्रेस, जिला कांग्रेस , ब्लॉक कांग्रेस, मंडलम कांग्रेस, सेक्टर कांग्रेस, युवा कांग्रेस, महिला कांग्रेस, सेवादल, एनएसयूआई, कांग्रेस विभाग प्रकोष्ठ, पार्षद, पूर्व पार्षद, पार्षद प्रत्याशी सहित समस्त कांग्रेसजन सम्मलित रहेंगे।

आया था बाइक से गया पैदल

ग्वालियर। मरीज देखने आए युवक की बाइक अज्ञात चोर चोरी कर ले गए। घटना कंपू थाना क्षेत्र के कमलाराजा अस्पताल पार्किंग की है। घटना का पता चलते ही पीडित थाने पहुंचा और मामला दर्ज कर लिया है। पुलिस ने बताया कि राहुल जाटव पुत्र रामेश्वर दयाल निवासी भिड बीमार रिश्तेदार को देखने आया था और बाइक को पार्किंग में खड़ी कर चला गया था। कुछ देर बाद वापस आया तो बाइक गायब थी। मामला समझ में आते ही पीडित थाने पहुंचा और मामले की शिकायत की। पुलिस ने उसकी शिकायत पर मामला दर्ज कर लिया है।

नलजल योजनायें 31 दिसंबर से पहले हस्तांतरित कर दी जायें: चीफइंजी. मौर्य

ग्वालियर। सभी नलजल योजनायें 31 दिसंबर से पहले हस्तांतरित कर दी जानी चाहिये। इससे शासन की मंशा के अनुसार जनता को हर घर में जल पहुंचाने की व्यवस्था हो सकेगी। समीक्षा बैठक में चीफ इंजीनियर आरएलएस मौर्य ने यह बात अपने अधीनस्थ पीएचई के अधिकारियों से कहीं। बैठक की अध्यक्षता कलेक्टर गुना डा. सतेन्द्र सिंह ने की। गुना कलेक्ट्रेट के सभागार में आयोजित समीक्षा बैठक में ग्वालियर परिक्षेत्र के चीफ इंजीनियर श्री मौर्य मुख्य रूप से उपस्थित थे।

कलेक्टर डा. सिंह ने कहा कि हर घर में नल से जल पहुंचाने की योजना सर्वोच्च प्राथमिकता वाली योजना है। जिले में कुछ योजनाओं में छोटी कमियां रह गई है। उनको 31 दिसंबर तक सुधार करते हुये ग्राम पंचायतों को हस्तांतरित करें। जिला पंचायत सीईओ प्रथम कौशिक तथा कार्यपालन यंत्री एमएस भटनागर भी मौजूद रहे। समीक्षा बैठक में 77 योजनाओं की समीक्षा की गई, जो लगभग पूर्ण हो चुकी है। इनकी कमियों को जल्द से जल्द पूरा करने के निर्देश कलेक्टर डा. सतेन्द्र सिंह ने दिये। उन्होंने यह भी कहा कि योजनाओं के कार्य की लगातार मानीटरिंग करने की जरूरत है। जहां सड़कें खोदकर पाईपलाईन बिछाई गई है। उनका सुधार कार्य जल्द कराया जाये। हस्तांतरण के बाद उचित देखरेख के भी निर्देश पीएचई अमले को दिये गये है।

कार्यालय कार्यपालन यंत्री लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग
मैकेनिकल खण्ड सागरताल ग्वालियर
Ph.No-0751-2452685, E-Mail-emphedgwa@mp.nic.in

क्रमांक/1595/तक./का.यं./लो.स्वा.यां.वि./मैकेनिकल/खण्ड/2024–25 ग्वालियर, दिनांक 28.11.2024

।। ई–निविदा आमंत्रण सूचना ।।

अपलेखित अनुपयोगी सामग्री के विक्रय हेतु (ऑन–लाईन नीलामी)

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है, कि कार्यालय कार्यपालन यंत्री, लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग मैकेनिकल खंड ग्वालियर के अंतर्गत गुना, शिवपुरी एवं दतिया जिले में नीचे लिखे अनुसार शासकीय सामग्री/पुरानी निष्प्रयोजित विभागीय सामग्री जो जहॉ जैसी स्थिति में है की नीलामी हेतु निविदा प्रपत्र"जी" में (एच0–1 उच्चतम बोलीकर्ताओं से) ऑन लाईन डिजिटली हस्ताक्षरित (Digitally Sealed) निविदायें ऑफरकर्ताओं सें (आयटम दर पर) संलग्न नियम एवं शर्तों पर वेवसाईट www.mptenders.gov.in से ऑनलाईन कय एवं प्रस्तुत की जा सकेगी। वित्तीय ऑफर ऑन लाईन खोले जावेगे। निविदा/नीलामी के संबंध में जो भी संशोधन किया जावेगा, उसका प्रकाशन केवल वेबसाईट पर ही होगा। निविदा/नीलामी के संबंध में जानकारी निम्नानुसार है :–

सामग्री का नाम :– सरल कमांक 1. जिला गुना, 2. जिला शिवपुरी एवं 3. जिला दतिया

1. Used material that completed its life now its Unserviceable and Scrap (Such as Engines parts bearing,shaft, crown pinion,clutch plates, hp & lp compressor body part , P.T. Pumps, tools, Drilling rod, Hammer, Button bit of various rig machine, Tyres used on heavy vehicles etc.) materials of office of the Assistant Engineer PHED Mechanical Sub Division Guna.(संलग्न सूची अनुसार) ।
2. Used material that completed its life now its Unserviceable and Scrap (Such as spare parts of Drilling Rig Machine & Trucks, old Hammers 165/152/115mm, Drill Rod, Button bit of various rig machine, Tyres used on heavy vehicles etc.) materials lying at office of the Assistant Engineer PHED Mechanical Sub Division Shivpuri.(संलग्न सूची अनुसार) ।
3. Used material that completed its life now its Unserviceable and Scrap (Such as spares parts of Drilling rig machine & Trucks, Hammers, Hammer sleeve, Engine, Compressor, Houzing, Mud Pump etc.) materials lying at office of the Assistant Engineer PHED Mechanical Sub Division Datia (Scrap material location PHE Workshop Sagartal Gwalior).(संलग्न सूची अनुसार) ।

जिला	निविदा कमांक दिनांक	सिस्टम निविदा क्रमांक	अपसेट वैल्यू (रूपये में)	अमानत राशि (रूपये में)	निविदा प्रपत्र का मूल्य (रूपये में)	सामग्री का निरीक्षण स्थल
गुना	21/2024-25 28.11.2024	2024_PHED_ 384849_1	1733450.00	173345.00	2000.00	लोक स्वास्थ्य यॉत्रिकी विभाग मैकेनिकल उपखण्ड गुना
शिवपुरी	22/2024-25 28.11.2024	2024_PHED_ 384878_1	1005950.00	100595.00	2000.00	लोक स्वास्थ्य यॉत्रिकी विभाग मैकेनिकल उपखण्ड शिवपुरी
दतिया	23/2024-25 28.11.2024	2024_PHED_ 384900_1	891960.00	89196.00	2000.00	लोक स्वास्थ्य यॉत्रिकी वर्कशॉप सागरताल ग्वालियर

सामग्री निरीक्षण का दिनांक – 29.11.2024 से 13.12.2024 तक कार्यालयीन समय में ।
कार्य स्थल से सामग्री उठाने की अवधि – 30 दिवस (वर्षा ऋतु सहित)।
ई–निविदाएं ऑनलाइन खरीदने की अंतिम तिथि :– 14.12.2024 समय 18:00 बजे तक
ई–निविदा में बिड प्रस्तुत करने की अंतिम तिथि :– 14.12.2024 समय 18:00 बजे तक
ई–निविदा खोलने की तिथि व समय :– 16.12.2024 समय 13:00 बजे के पश्चात

कार्यपालन यंत्री
लोक स्वास्थ्य यांत्रिकीय विभाग
मैकेनिकल खण्ड ग्वालियर

G19696/24

पूर्व सरपंच ने ससुराल में ठोंके फायर

- मामला दर्ज, राइफल जब्त

ग्वालियर। ससुराल पहुंचने से पहले ही दामाद ने राइफल लोड कर दनादन फायरिंग कर दी। घटना आंतरी थाना क्षेत्र के कल्याणी तिराहे की है। अचानक हुई घटना से लोग दहशत में आ गए और पुलिस को सूचना दी। सूचना मिलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद मामला दर्ज कर आरोपी को हिरासत में ले लिया है। पकड़ा गया आरोपी पूर्व सरपंच है और उसके खिलाफदो मामले पूर्व में भी दर्ज हैं।

आंतरी थाना प्रभारी देवेन्द्र मिश्रा ने बताया कि बीते रोज कल्याणी तिराहे पर एक युवक राइफल लेकर आया और वहां पर अचानक फायरिंग कर दी। एक के बाद एक फायर करते युवक की हरकत से लोग दहशत में आ गए और सुरक्षित स्थानों पर छिपकर जान बचाई और पुलिस को सूचना दी। सूचना मिलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और फायरिंग कर रहे युवक को दबोच लिया। जिस समय पुलिस ने फायरिंग कर रहे युवक को पकड़ा तो वह पुलिस पर बिफर गया, उसका कहना था कि राइफल उसकी है और वह फायरिंग करेगा, कई बार समझाने के बाद युवक अड़ा रहा तो पुलिस ने उसकी राइफल जब्त कर उसे हिरासत में लेकर मामला दर्ज कर लिया है। बताया गया है कि पकड़ा गया सीताराम पुत्र कदम सिंह निवासी लधवाया हाल निवास समीक्षा बीयर बार के पास रहता है। उसकी ससुराल आंतरी में है और वह अपने रूपये लेने आया था। पूर्व में वह समाया पंचायत का सरपंच रह चुका है। पुलिस पड़ताल में पता चला है कि पकड़े गए आरोपी के खिलाफचीनौर में दो मामले दर्ज हैं।

सांसद डॉ सुधांशु त्रिवेदी को किया सम्मानित

ग्वालियर। भाजपा नेता राज्यसभा सांसद डॉ सुधांशु त्रिवेदी शनिवार को ग्वालियर प्रवास पर आये। ग्वालियर आगमन पर मातृभूमि सेवा मिशन कुरुक्षेत्र मध्यप्रदेश की ओर से सांसद डॉ सुधांशु त्रिवेदी का भगवान श्रीराम का चित्र, बुके अंगवस्त्र, मर्यादा और पुरुषोत्तम राम विशेषांक कुरुक्षेत्र संदेश पत्रिका भेंट कर अभिनंदन किया गया। इस अवसर पर कौशल शर्मा अध्यक्ष बीजेपी ग्रामीण अध्यक्ष, नगर अध्यक्ष बीजेपी अभय चौधरी, अशोक शर्मा, राकेश हरदेनिया, रामरूप शर्मा आर्मी, रमेश कुशवाह भी उपस्थित थे।

रायरु पर बन रही अवैध कॉलोनी पर कार्यवाही कर सड़क हटाई

ग्वालियर । शहर में बस रहीं अवैध कॉलोनियों पर निरंतर कार्यवाही नगर निगम की भवन शाखा द्वारा की जा रही है। जिसके तहत शनिवार को रायरू मुरैना रोड पर अवैध कॉलोनी पर कार्यवाही की गई। भवन अधिकारी राजीव सोनी ने बताया कि ग्राम रायरू में सतेंद्र भदौरिया आदि के द्वारा रकबा लगभग 10 बीघा पर अवैध रूप से कॉलोनी विकास कार्य किया जा रहा था। जिसकी नगर निगम से कोई भी विकास अनुज्ञा प्राप्त नहीं की गई थी। कालोनी में किए गए अवैध सड़क, सीवर, बिजली के पोल, बाउंडरीवाल, नींव आदि कार्य के विरुद्ध मौके पर कार्यवाही की गई। कार्रवाई में तहसीलदार राघवेंद्र कुशवाह, मदाखलत प्रभारी शैलेंद्र चौहान, निगम पटवारी पंकज भार्गव, भवन निरीक्षक अजय शर्मा एवं पुरानी छावनी थाना पुलिस बल उपस्थित था।

मैरिज गार्डन से चोरी किया फोटोग्राफर का बैग, सीसीटीव्ही फुटेज से पकड़ा चोर

ग्वालियर। लगुन-फलदान के कार्यक्रम में फोटोग्राफी करने आए युवक के दो बैग चोर चोरी कर ले गए। घटना जनकगंज थाना क्षेत्र के एबी रोड गोल पहाडिया स्थित लवकुश गार्डन की है। घटना का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और सीसीटीवी खंगाले तो एक युवक बैग चोरी कर ले जाता कैद हुआ। जिसकी पहचान के बाद पुलिस ने चोर को पकड़ लिया है।

जनकगंज थाना क्षेत्र के हरकोटा शीर निवासी विजय सिंह कुशवाह पुत्र रमेश सिंह कुशवाह फोटोग्राफर है। बीती रात वह कैलाश शर्मा पुत्र रामसेवक शर्मा के लगुन-फलदान के कार्यक्रम में फोटोग्राफी करने के लिए गया था। अपना बैग वह स्टेज पर रखकर फोटोग्राफी करने लगा और कुछ देर बाद जब वापस आया तो बैग गायब था। बैग गायब देखकर उसका माथा ठनका और उसने शोर मचाया। मामले का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद मामला दर्ज कर वहां पर लगे सीसीटीवी कैमरे खंगाले तो एक युवक बैग ले जाता नजर आया। उसकी पहचान की तो पता चला कि संदेही युवक लवकुश गार्डन के पीछे रहने वाला करण जाटव है। इसका पता चलते ही पुलिस ने उसे गिरफ्तार किया और पूछताछ की तो वह चोरी से इनकार करने लगा। पुलिस ने जब उसके कमरे की तलाशी ली तो अलमारी में चोरी किया गया बैग और वीडियो कैमरा सहित अन्य सामान बरामद कर लिया है। पुलिस पकड़े गये चोर से पूछताछ कर रही है।

अज्ञात बदमाशों ने युवक को पीटा

ग्वालियर। पैदल जा रहे युवक का रास्ता रोककर तीन अज्ञात बदमाशों ने मारपीट कर जान से मारने की धमकी दे दी। घटना झांसी रोड थाना क्षेत्र के रामनगर की है। घटना का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और घायल को उपचार के लिए पहुंचाकर उसकी शिकायत पर मामला दर्ज कर लिया है। पुलिस अब आस-पास लगे सीसीटीवी कैमरों की मदद से आरोपियों की तलाश कर रही है।

झांसी रोड थाना क्षेत्र के नाकाचंद्रबदनी निवासी बबलू सिंह पुत्र एसएस सिंह प्राइवेट जॉब करता है। बीते रोज वह किसी काम से रामनगर रोड स्थित गोयल बाउण्ड्री के पास गया था और वापस लौट रहा था कि तभी तीन युवक आए और उसका रास्ता रोककर उसकी मारपीट करना शुरू कर दिया। वारदात के बाद आरोपी उसे जान से मारने की धमकी देकर फरार हो गए। मामले का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद मामला दर्ज कर लिया है।

मुस्कान ने माउंट किलिमंजारो पर फहराया तिरंगा, सीएम ने दी बधाई

ग्वालियर। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने अशोकनगर की बिटिया मुस्कान रघुवंशी को अफ्रीकी महाद्वीप की सबसे ऊंची चोटी माउंट किलिमंजारो पर विजय प्राप्त करने के लिए बधाई दी है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि बिटिया मुस्कान ने माउंट किलिमंजारो पर तिरंगा ध्वज फहराकर मध्यप्रदेश सहित सम्पूर्ण देश को गौरवान्वित किया है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने बेटी मुस्कान को आशीर्वाद एवं शुभकामनाएं देते हुए उनके सुखद, सफल और उज्ज्वल भविष्य की कामना की है।

एटीएम लुटेरों की तलाश में पुलिस हरियाणा रवाना

ग्वालियर। डबरा के पिछोर तिराहे से एटीएम उखाड़कर कर एटीएम मशीन से करीब नौ लाख रुपए का कैस पार करने वालों के खिलाफपुलिस को अहम सुराग मिले है और पुलिस की दो टीमें हरियाणा के लिए रवाना हो गई है। वहीं दो टीमें झांसी और डबरा में पड़ताल में लगी हुई है। पुलिस अफसरों की मानें तो जल्द ही इस मामले में लुटेरों की पहचान के साथ ही गिरफ्तारी की जाएगी।

ज्ञात हो कि दो दिन पहले डबरा पिछोर तिराहा स्थित एसबीआई के एटीएम को अज्ञात बदमाश उखाड़ ले गए थे। वारदात का पता चलते ही पुलिस और क्राइम ब्रांच की टीमें बदमाशों की तलाश में लगीं और दतिया के चिरूला थाना क्षेत्र में उखाड़ा गया एटीएम बरामद कर लिया है। बरामद एटीएम मशीन की जांच की तो पता चला कि बदमाश उसमें से करीब नौ लाख रुपए पार कर ले गए है। दतिया-झांसी के रास्ते में पुलिस और क्राइम ब्रांच को महत्वपूर्ण सुराग हाथ लगे है और इन सुरागों के आधार पर क्राइम ब्रांच व डबरा थाना पुलिस हरियाणा के लिए रवाना हो गई है। अभी तक पुलिस पड़ताल में पता चला है कि एक आरोपी दतिया-झांसी का है और उसने ही आरोपियों को बुलाया था।

कार्यालय कलेक्टर जिला ग्वालियर (म0प्र0)
क्र./क्यू/क्रय/स्टेशनरी/2024-25 19430 ग्वालियर दिनांक 27-11-2024

// निविदा प्रपत्र //

(Tender ID 2024_DC_384557_1)

वित्तीय वर्ष 2024-25 हेतु कलेक्टर कार्यालय जिला ग्वालियर हेतु स्टेशनरी एवं अन्य सामग्री क्रय किये जाने हेतु स्थानीय अनुभवी संस्थाओं से दिनांक 12.12.2024 को दोपहर 4.00 बजे तक ऑनलाईन निविदाएं आमंत्रित की जाती है, इच्छुक स्टेशनरी सामग्री विक्रेता निर्धारित निविदा प्रपत्र में ऑनलाईन निविदाएं https://mptenders.gov.in पर दिनांक 12.12.2024 को सांय 04 बजे तक प्रस्तुत कर सकते है । प्राप्त निविदायें दिनांक 13.12.2024 को अपराहन 04 बजे उपस्थित निविदाकारों के समक्ष कार्यालय के कक्ष क्रमांक 206 में खोली जावेगी ।

2/ निविदा प्रपत्र एवं निविदा शर्ते https://mptenders.gov.in पर उपलब्ध है ।

(कलेक्टर महोदय द्वारा आदेशित)

संयुक्त कलेक्टर
वास्ते कलेक्टर
जिला ग्वालियर (म.प्र.)

G19679/24

कार्यालय अधीक्षण यँत्री ग्रामीण याँत्रिकी सेवा मण्डल ग्वालियर (म.प्र.) पिन- 474011
☎ : 0751-2344420 (O) 💻 : seresgwalior@mp.gov.in

क्रमांक/1537/ग्रा.याँ.से./ई-निविदा/2024 ग्वालियर, दिनांक 28/11/2024

// संक्षिप्त ई-निविदा आमन्त्रण सूचना क्रमांक- 08/SERESGwl/2024-25 //

निम्नलिखित कार्यों हेतु म.प्र. सरकार के केन्द्रीयकृत ई-पंजीयन प्रणाली में पंजीकृत अथवा अन्य समकक्ष / समतुल्य श्रेणी में पंजीकृत ठेकेदारों से प्रतिशत दर पर ऑनलाईन निविदा आमंत्रित की जाती हैं-

क्र.	टेण्डर आईडी क्रं.	कार्य का नाम/स्थान	जिले का नाम	कार्य की अनुमानित लागत (रलाख में)	समयावधि (वर्षाकाल सहित)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
1	2024_RES _384867_1	मल्टीपरपज काम्पलेक्स निर्माण (बहुउद्देशीय केन्द्र) रायपुर सर्वे नं. 32 ज.पं. पोहरी पिन-473775	शिवपुरी	48.98	270 दिन
2	2024_RES _384868_1	मल्टीपरपज काम्पलेक्स निर्माण (बहुउद्देशीय केन्द्र) एसवाया सर्वे नं. 101 ज.पं. पोहरी पिन - 473775	शिवपुरी	48.98	270 दिन
3	2024_RES _384869_1	मल्टीपरपज काम्पलेक्स निर्माण (बहुउद्देशीय केन्द्र) ढकरौरा सर्वे नं. 661 ज.पं. बदरवास पिन - 473885	शिवपुरी	48.98	270 दिन
4	2024_RES _384870_1	मल्टीपरपज काम्पलेक्स निर्माण (बहुउद्देशीय केन्द्र) दिदावली सर्वे नं. 260 ज.पं. करैरा पिन - 473660	शिवपुरी	48.98	270 दिन

1. विस्तृत निविदा सूचना विवरण वेबसाईट https://www.mptenders.gov.in पर देखा जा सकता है।
2. निविदा प्रपत्र दिनांक 10.12.2024 समय 09:00 AM से 24.12.2024 समय 06:00 PM तक केवल ऑनलाईन क्रय एवं सबमिट किये जा सकेंगे।
3. यदि निविदा में कोई संशोधन किया जाता है तो सिर्फ Web Portal https://www.mptenders.gov.in पर ही Publish किया जावेगा, समाचार पत्रों में प्रकाशित नहीं किया जावेगा।

(आर.सी जाटव)
अधीक्षण यँत्री
ग्रामीण याँत्रिकी सेवा
मण्डल ग्वालियर

G19641/24

संपादकीय

महाराष्ट्र में सरकार गठन में देरी से बिगड़ रहा सत्ता का समीकरण

पिछली सरकार में काफी उथल-पुथल बनी रही। तब शिवसेना के साथ मिल कर भाजपा ने चुनाव लड़ा था, मगर चुनाव नतीजों के बाद शिवसेना ने पाला बदल लिया और कांग्रेस तथा राष्ट्रवादी कांग्रेस से हाथ मिला कर महाअघाड़ी की सरकार बना ली थी। गठबंधन में चुनाव जीत कर बहुमत हासिल करने पर अक्सर मुख्यमंत्री पद को लेकर असमंजस की स्थिति बन जाती है। फिर, गठबंधन धर्म का निर्वाह और सहयोगी दलों के साथ सौहार्दपूर्ण समीकरण बिठाने में कई बार कठिनाई पेश आती है। महाराष्ट्र में भाजपा के सामने भी वही स्थिति है। वहां उसने एकनाथ शिंदे की अगुआई वाली शिवसेना और अजित पवार की अगुआई वाली राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के साथ मिल कर चुनाव लड़ा था। सबसे अधिक सीटें भाजपा को मिलीं। स्पष्ट बहुमत से महज तेरह सीटें कम। इस लिहाज से मुख्यमंत्री पद पर उसी का हक बनता है। शुरू में एकनाथ शिंदे ने जरूर कुछ दबाव बनाने का प्रयास किया था, मगर आखिरकार उन्होंने भी भाजपा का नेतृत्व स्वीकार कर लिया। इस तरह भाजपा के लिए रास्ता साफ हो गया और देवेंद्र फडणवीस को मुख्यमंत्री पद की दौड़ में सबसे आगे माना जाने लगा। मगर दिल्ली में पार्टी के शीर्ष नेतृत्व के साथ बैठक के बाद भी मुख्यमंत्री के नाम की घोषणा नहीं की जा सकी। चुनाव नतीजों के सात दिन बाद भी इस मामले में निर्णय न लिए जा सकने से स्वाभाविक ही तरह-तरह के कयास लगाए जा रहे हैं। पिछली सरकार में काफी उथल-पुथल बनी रही। तब शिवसेना के साथ मिल कर भाजपा ने चुनाव लड़ा था, मगर चुनाव नतीजों के बाद शिवसेना ने पाला बदल लिया और कांग्रेस तथा राष्ट्रवादी कांग्रेस से हाथ मिला कर महाअघाड़ी की सरकार बना ली थी। फिर शिवसेना और राष्ट्रवादी कांग्रेस में बड़ी टूट हुई और इन दलों के नेताओं ने भाजपा के साथ मिल कर एकनाथ शिंदे की अगुआई में सरकार बना ली थी। संभव है, वहां उलट-फेर की आशंका भाजपा को अब भी सता रही होगी, इसलिए वह नई सरकार के गठन में किसी भी तरह सहयोगी दलों को असंतुष्ट नहीं रखना चाहती। फिर, जातियों का समीकरण भी उसे साधना है। वह मराठा दबदबे से अलग पिछड़े और दलित वर्ग में पैठ बनाना चाहती है।

मध्यप्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़ और हरियाणा के विधानसभा चुनावों के बाद जिस तरह इन वर्गों को संतुष्ट करने का प्रयास किया, उससे यह कयास स्वाभाविक रूप से लगाया जाने लगा है कि महाराष्ट्र में भी भाजपा कोई हैरान करने वाला फैसला कर सकती है। राजनीति में केवल सरकार बना लेना महत्त्वपूर्ण नहीं होता, सरकार के माध्यम से अपने जनाधार का विस्तार करना भी होता है। भाजपा इसी रणनीति पर काम कर रही है। मगर सरकार के गठन में देरी से प्रशासनिक कामकाज पर प्रतिकूल असर पड़ता है। मतदाता उन वादों को अमली जामा पहनते देखना चाहते हैं, जो चुनाव प्रचार के समय विजेता पक्ष ने किए थे। प्रशासनिक अमला इंतजार करता रहता है कि नई सरकार निर्देश दे कि उसे किन मसलों को तरजीह देना है और किन मसलों को मुल्तवी करना है। महाराष्ट्र आर्थिक रूप से समृद्ध राज्यों में शुमार है, इसलिए वहां सरकार गठन में होने वाली देरी का असर अर्थव्यवस्था पर भी पड़ता है। यह ठीक है कि गठबंधन में संतुलन साधना कठिन होता है, मगर महाराष्ट्र में ऐसी कोई अड़चन नजर नहीं आती। भाजपा को ही अपने असमंजस से बाहर निकलना है। चूंकि वह बड़ी पार्टी है, उसे सहयोगी दलों के साथ उदारता पूर्वक व्यवहार करना और उनके सहयोग का सम्मान करना होगा, तभी महायुति की टिकाऊ और भरोसेमंद सरकार बन सकेगी। पहले ही महाराष्ट्र काफी उठा-पटक झेल चुका है, उसे राजनीतिक स्थायित्व की जरूरत है।

दौलत और दिखावे की दौड़ में हाशिये पर संवेदनशीलता, क्या हम असल में रह गए हैं इंसान

मनुष्यता को बचाने की लड़ाई हर सभ्यता में दर्ज है। वहां से चलते हुए मनुष्य आधुनिक होते हुए आज तकनीकी पर इतना निर्भर हो चला है कि अपने आपको ज्यादा से ज्यादा आराम देना चाहता है। मगर इसके समांतर हुआ क्या है? ऐसा लगता है कि मशीनी बोझ के तले सांस ले रहा इंसान आज खुद भी एक मशीन-सा ही हो चला है। ऐसी मशीन, जो बढ़िया चमक-दमक के साथ चलती जाती है। उसकी अपनी कोई विचारधारा नहीं होती। उसमें न अहसास होते हैं, न भावुकता। यहीं पर दिखावा नामक नकारात्मक सोच बलवती हो जाती है। आज के इस अनूठे समय में बहुत सारे लोगों के पास आडंबर और शोशेबाजी के लिए तो समय निकल आता है, लेकिन आत्मविकास और आत्म-उन्नयन के नाम पर उनको समय की कमी महसूस होती है।

कई अभिभावक अपने किशोर होते बच्चे से यह कहते हुए मिल जाते हैं कि बेटा तुम किसी पर भरोसा न करनाज किसी की बात में मत आना। इस धरती पर तुम ही मनुष्य हो, बाकी की मनुष्यता तो खो गई है। मगर यह सब रटाते हुए अभिभावक यह कामना भी करते रहते हैं कि उनके बच्चे पर सारा संसार भरोसा करे। उनके बच्चे को ईमानदार मान ले। मनुष्यता को बचाने की लड़ाई हर सभ्यता में दर्ज है। वहां से चलते हुए मनुष्य आधुनिक होते हुए आज तकनीकी पर इतना निर्भर हो चला है कि अपने आपको ज्यादा से ज्यादा आराम देना चाहता है। मगर इसके समांतर हुआ क्या है? ऐसा लगता है कि मशीनी बोझ के तले सांस ले रहा इंसान आज खुद भी एक मशीन-सा ही हो चला है। ऐसी मशीन, जो बढ़िया चमक-दमक के साथ चलती जाती है। उसकी अपनी कोई विचारधारा नहीं होती। उसमें न अहसास होते हैं, न भावुकता। यहीं पर दिखावा नामक नकारात्मक सोच बलवती हो जाती है। आज के इस अनूठे समय में बहुत सारे लोगों के पास आडंबर और शोशेबाजी के लिए तो समय निकल आता है, लेकिन आत्मविकास और आत्म-उन्नयन के नाम पर उनको समय की कमी महसूस होती है। अपनी सोच और जीवनशैली को दुरुस्त करने की बात भी उनसे कही जाए तो वे टाल दिया करते हैं। एक बार आभासी दुनिया के झरोखे से देख लिया जाए तो पता चलेगा कि मनुष्य के पास फालतू और अनर्गल चीजों के लिए उमंग है और फुर्सत भी। मेट्रो में रील बनाई जा रही है। रेलवे प्लेटफार्म पर कुछ लोग नाच-कूद रहे हैं। मगर प्लेटफार्म पर चाय-समोसे बेच रही किसी बुजुर्ग महिला से कोई इतना भी नहीं पूछना चाहता कि माताजी, आपको भरण-पोषण के लिए हर रोज इतना काम करना पड़ रहा हैज्ञ बताइए अपनी कहानीज्ञ अपना दुखज्ञ क्या हम कुछ कर सकते हैं..! ऐसी तकलीफ कोई नहीं उठाना चाहता। कोई गलती से भी इस मजबूरी से गुजर रही महिला का दुख या कष्ट नहीं बांटना चाहता है। हमारे बुजुर्ग कहते थे कि अपने आसपास जो भी घटित हो रहा है, उसे गौर से देखा करो। उसका तुमसे भी कोई नाता है। मसलन कहीं भूख-गरीबी बीमारी है तो अनदेखा मत करो। कोई अगर करीब का परेशान है तो उसे सिर टिकाने के लिए अपना कंधा दो। उसका मन हल्का होने दो। अपनी तरफ से कुछ भी योगदान हो, जिससे आसपास का परिवेश सौहार्दपूर्ण हो, तो ऐसा किया करो। मगर इन बेहद जरूरी मुद्दों को खंगालने, संवारने, सुधारने, फैलाने और उस पर विचार करने आदि के लिए लोगों के पास वक्त नहीं है। कई बार बेबसी होती है, कई बार चमक-दमक में फंसने के बाद जरा सरल होकर जीवन की गली से होकर गुजरने का भाव भी पैदा ही नहीं होता। हालांकि संसार को आज संवेदनशील तथा मानवीय भावना के विकास की बहुत आवश्यकता है, लेकिन मतलबीपन, तंगदिली या आडंबर के खेल में अत्यधिक रमने के कारण हम इस बात पर विशेष या उतना ध्यान नहीं दे पाते, जितना इस संसार को अच्छा बनाने के लिए जरूरी होता है। निश्चित रूप से मानव कहलाने योग्य वे ही हैं जो बात नहीं, कर्म करके किसी दुखी के चेहरे पर हंसी और खुशी लाने की सोच रखते हैं। आज तो पाठशाला और पाठ्यक्रम भी इस तरह के कारोबारी हो गए हैं कि पांच साल का बालक भी जल्दी-जल्दी रुपए कमाने के सपने देखता है। किसी ने कितनी प्यारी बात कह दी है कि ऐसा कोई विद्यालय हो तो बताना, जहां बच्चों को पैसा कमाने की मशीन नहीं, संस्कार, सुविचार और विश्व बंधुत्व का पाठ पढ़ाया जाता हो। आज के असुरक्षित सामाजिक-आर्थिक परिवेश में अभिभावक भी अपनी संतान को चट पढ़ाई और पट दौलत का ही सूत्र रटाए जाते हैं। यह नहीं सोचते कि अपनी औलाद को ऐसा बनाया जाए, जहां मन और आत्मा अच्छे विचारों के आधार पर पुष्पित और पल्लवित हो। कितने ही अभिभावक अपने किशोर होते बच्चे से यह कहते हुए मिल जाते हैं कि बेटा तुम किसी पर भरोसा न करनाज किसी की बात में मत आना। इस धरती पर तुम ही मनुष्य हो, बाकी की मनुष्यता तो खो गई है। मगर यह सब रटाते हुए अभिभावक मन ही मन यह कामना भी करते रहते हैं कि उनके बच्चे पर सारा संसार भरोसा करे। उनके बच्चे को सबसे ईमानदार और सच्चा मान ले। यह कैसी उलटबांसी है। जिस पेंसिल से वे बाकी लोगों का खराब छवि बनाकर दिखा रहे हैं, जरा उसी से अपनी शक्ल भी बनाकर ठीक से देख लेते। इसीलिए यह जगत विरोधाभास का शिकार हो रहा है। हम सब अच्छी और सुखद दुनिया तो चाहते हैं, लेकिन उसे तैयार करने के लिए कौन, कैसे बीड़ा उठाएगा, यह सवाल दूसरे के पाले में ही जाता हुआ प्रतीत होता है। 'येन-केन-प्रकारेण मेरे पास पर्याप्त दौलत आ जाए, चुपचाप से छल कपट कर लूंज मेरा मतलब सिद्ध हो जाए, मुझे लाइन में इंतजार न करना पड़ जाएज मेरे घर के सामने कचरा न होज मैं बाहर से अच्छा और संभ्रांत नजर आऊं..!' इस तरह के चिंतन मनन और ऐसी मनोवृत्ति ने ही आज की सुविधाभोगी पीढ़ी को भर-भर कर अवसाद, कुंठा और उदासी दी है। एक बार फिर से हर घर में कबीर को सुनना चाहिए कि मानव अपने लालच के फंदे में फंसी वह मछली है जो जल में रहकर भी प्यासी है। यह अपने भीतर झांकने और आत्मचिंतन के लिए समय निकालने का समय है। हमें जाग जाना चाहिए। हम किस तरह की दिनचर्या में जी रहे हैं। मतलबीपन को अपनी सोच से उखाड़ फेंकने का संकल्प आज ही लेना चाहिए। इसे हर समय याद करने की जरूरत है कि मनुष्य वही है, जो मनुष्य के लिए मरे।

ज्ञान के दरवाजे खोलने की पहल

सरकार की यह पहल गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा एवं शोध तक शहरी और साथ ही ग्रामीण क्षेत्र के युवाओं की पहुंच को आसान बनाएगी। यह नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति विकसित भारत और नेशनल रिसर्च फाउंडेशन के लक्ष्यों के अनुरूप है जो भारतीय शिक्षा जगत और युवा सशक्तीकरण के लिए गेम-चेंजर साबित होगी। इस योजना का लक्ष्य उन संस्थानों के लिए शोध पत्रिकाओं तक पहुंच का विस्तार करना है। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने पिछले दिनों देश भर के छात्रों को विद्वानों के शोध लेखों और जर्नल प्रकाशन तक आसान पहुंच प्रदान करने के उद्देश्य से वन नेशन वन सब्सक्रिप्शन (ओएनओएस) नामक एक नई योजना को मंजूरी दी। इस योजना के माध्यम से देश के लगभग 1.8 करोड़ छात्र, शिक्षक और शोधकर्ता विश्व स्तर पर प्रकाशित हो रहे 13,000 से अधिक ई-जर्नल तक आसान पहुंच हासिल कर सकेंगे। ओएनओएस योजना केवल प्रमुख महानगरीय क्षेत्रों में ही नहीं, बल्कि टियर 2 और टियर 3 शहरों में भी रहने वाले छात्रों, शोधकर्ताओं और शिक्षकों को भी वैश्विक स्तर पर सृजित हो रहे ज्ञान का लाभ उठाने का अवसर प्रदान करेगी। इससे पहले जर्मनी और उरुग्वे सरकारों ने अनुसंधान सामग्री तक समान राष्ट्रीय पहुंच की शुरुआत की थी। वास्तव में वैज्ञानिक और शैक्षणिक प्रगति तभी प्राप्त की जा सकती है, जब वैश्विक ज्ञान तक पहुंच सुलभ हो। अनुसंधान एवं विकास ही हम सभी के लिए बेहतर जीवन का द्वार खोलती है। भारत पिछले कुछ वर्षों में श्रम-आधारित अर्थव्यवस्था को कौशल-आधारित अर्थव्यवस्था में बदलने में काम कर रहा। 15 अगस्त, 2022 को अपने स्वतंत्रता दिवस संबोधन के दौरान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भारत की प्रगति में अनुसंधान और विकास की महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में बात की थी और जय जवान-जय किसान-जय विज्ञान के बाद जय अनुसंधान जोड़ा था। सरकार की यह पहल गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा एवं शोध तक शहरी और साथ ही ग्रामीण क्षेत्र के युवाओं की पहुंच को आसान बनाएगी। यह नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, विकसित भारत और नेशनल रिसर्च फाउंडेशन के लक्ष्यों के अनुरूप है, जो भारतीय शिक्षा जगत और युवा सशक्तीकरण के लिए गेम-चेंजर साबित होगी। इस योजना का लक्ष्य उन संस्थानों के लिए शोध पत्रिकाओं तक पहुंच का विस्तार करना है, जिनके पास पर्याप्त संसाधनों की कमी है। यह प्लेटफार्म एक जनवरी, 2025 को शुरू होने वाला है। इस मंच पर एल्सेवियर साइंस डायरेक्ट (लैंसेट सहित), स्प्रिंगर नेचर, विली ब्लैकवेल पब्लिशिंग, टेलर एंड फ्रांसिस, आइईईई, सेज पब्लिशिंग, अमेरिकन केमिकल सोसायटी, अमेरिकन मैथमेटिकल सोसायटी, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस और बीएमजे जर्नल्स सहित 30 अंतरराष्ट्रीय प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित 13,000 पत्रिकाएं उपलब्ध होंगी। वर्तमान में विभिन्न मंत्रालयों के अंतर्गत दस अलग-अलग पुस्तकालय संघ हैं, जो अपने प्रशासनिक दायरे में उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए पत्रिकाओं तक पहुंच प्रदान करते हैं। इसके अलावा अलग-अलग संस्थान अलग-अलग पत्रिकाओं की सदस्यता लेते हैं। वैज्ञानिक पत्रिकाओं की सदस्यता एक महंगा मामला है। ओएनओएस के आरंभ होने से यह बहुत सस्ता हो जाएगा। एक ही मंच पर सारी पत्रिकाएं उपलब्ध होने से शोधार्थियों को भटकना भी नहीं पड़ेगा। एक आंकड़े के अनुसार भारत ने 2018 में इलेक्ट्रानिक और प्रिंट पत्रिकाओं की सदस्यता पर लगभग 1,500 करोड़ रुपये खर्च किए थे। शोध अंतर्दृष्टि डाटाबेस स्किवल के अनुसार 2017 और 2022 के बीच भारत के शोध प्रकाशन में लगभग 54 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो वैश्विक औसत (22 प्रतिशत) के दोगुने से भी अधिक है। भारत का शोध पत्रिकाओं के प्रकाशन में चौथा स्थान (13 लाख अकादमिक पेपर) रखता है, जो चीन (45 लाख), अमेरिका (44 लाख) और ब्रिटेन (14 लाख) के ठीक बाद है, परंतु जब उत्पादित शोध के प्रभाव की बात आती है, तो उद्धरणों (साइटेशन) की संख्या में भारत पीछे रह जाता है और दुनिया में नौवें स्थान पर आता है। सरकारी थिंक टैंक नीति आयोग और इंस्टीट्यूट फार कांपिटिटिवनेस द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार भारत का अनुसंधान एवं विकास पर यह खर्च दुनिया में सबसे कम है। देश की नवाचार सफलता में एक और बाधा अनुसंधान एवं विकास कर्मियों की कम संख्या है। यूनेस्को इंस्टीट्यूट आफ स्टैटिस्टिक्स के अनुसार प्रति दस लाख आबादी पर केवल 253 विज्ञानी या शोधकर्ता हैं, जो विकसित राष्ट्रों की तुलना में काफी कम है। निजी क्षेत्र का योगदान अनुसंधान एवं विकास पर सकल व्यय का 40 प्रतिशत से कम है, जबकि उन्नत देशों में यह 70 प्रतिशत से अधिक है। दुनिया में अनुसंधान एवं विकास पर खर्च करने के मामले में शीर्ष 2,500 वैश्विक कंपनियों की सूची में केवल 26 भारतीय कंपनियां हैं। जबकि चीनी कंपनियों की संख्या 301 है। इस अंतर को प्राथमिकता के आधार पर पाटने की आवश्यकता है। चीन का मुकाबला करने के लिए उससे सीख लेने में हर्ज नहीं। इजरायल से भी सीख ली जानी चाहिए, जिसने यह दिखा दिया है कि एक छोटा राष्ट्र होने के बावजूद अनुसंधान एवं विकास में निवेश को प्राथमिकता देकर सतत विकास हासिल किया जा सकता है। भारत में निजी कंपनियां मुख्य रूप से बिक्री और विपणन में निवेश करती हैं और अनुसंधान एवं विकास में पर्याप्त संसाधनों का निवेश नहीं करती हैं। यही कारण है कि भारतीय ब्रांड नवाचार नहीं कर रहे हैं, जिसके चलते भारतीय निर्माता विश्व स्तर पर अनुकरणीय उत्पाद नहीं बना रहे हैं और विश्व बाजार में चीनी कंपनियों की चुनौती का सामना नहीं कर पा रहे हैं। अब समय आ गया है कि मेक इन इंडिया के लिए अनुसंधान एवं विकास पर फिर से ध्यान केंद्रित किया जाए। भारत के पास नवाचार का वैश्विक चालक बनने के लिए आवश्यक सभी सामग्रियां, एक मजबूत बाजार क्षमता, असाधारण प्रतिभावान आबादी और मितव्ययी नवाचार की एक संपन्न संस्कृति हैं। जरूरत है तो कच्ची प्रतिभाओं की खान को सही मार्गदर्शन की। वास्तव में एक मजबूत अर्थव्यवस्था होने के लिए देश के पास दीर्घकालिक और सार्थक स्तर पर ज्ञान प्रणाली की आवश्यकता है, जो अर्थव्यवस्था को शक्ति प्रदान करती है। जितनी बौद्धिक संपदा सृजित होगी उतने बड़े पैमाने पर रोजगार भी सृजित होंगे।

(लेखकजेएनयू के अटल स्कूल आफ मैनेजमेंट में प्रोफेसर हैं।)

प्रदूषण की आग से घुट रहीं विकासशील देशों की सांसें, इस लापरवाही के लिए कौन जिम्मेदार?

मगर विडंबना है कि इस समस्या की गंभीरता और इसके कारणों के बिल्कुल स्पष्ट होने के बावजूद उससे निपटने के लिए ठोस कदम उठाना जरूरी नहीं समझा जाता। यही वजह है कि अब इस समस्या के बढ़ते दायरे ने व्यापक तबाही के संकेत देने शुरू कर दिए हैं। हालांकि हवा में जहर घुलने से कई तरह की बीमारियों की चपेट में लोगों के आने के तथ्य एक बड़ी चुनौती बनते जा रहे हैं और इस हकीकत से मुंह मोड़ना अब संभव नहीं रह गया है। मगर हाल के वर्षों में जंगलों में लगने वाली आग की वजह से हवा में जो प्रदूषण घुल रहा है, उससे भारी संख्या में लोगों की जान जा रही है। स्वास्थ्य पत्रिका 'द लैंसेट' में प्रकाशित एक अध्ययन में इससे संबंधित जो ब्योरा सामने आया है, वह इसकी गंभीरता को रेखांकित करने के लिए काफी है।

ऐसी समस्या से निपटने के लिए विकसित देशों की ओर से विकासशील देशों को आर्थिक और तकनीकी मदद उपलब्ध कराने की जरूरत पर जोर दिया जाता रहा है, लेकिन समृद्ध देश हर ऐसे मौके पर अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेते हैं। विकासशील देशों में प्रदूषण ने इंसान के सामने कैसी चुनौतियां खड़ी कर दी हैं, यह सब जानते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इस समस्या से लड़ने के लिए बैठकें होती हैं, हर वर्ष नए उपाय बताए जाते हैं। मगर विडंबना है कि इस समस्या की गंभीरता और इसके कारणों के बिल्कुल स्पष्ट होने के बावजूद उससे निपटने के लिए ठोस कदम उठाना जरूरी नहीं समझा जाता। यही वजह है कि अब इस समस्या के बढ़ते दायरे ने व्यापक तबाही के संकेत देने शुरू कर दिए हैं। हालांकि हवा में जहर घुलने से कई तरह की बीमारियों की चपेट में लोगों के आने के तथ्य एक बड़ी चुनौती बनते जा रहे हैं और इस हकीकत से मुंह मोड़ना अब संभव नहीं रह गया है। मगर हाल के वर्षों में जंगलों में लगने वाली आग की वजह से हवा में जो प्रदूषण घुल रहा है, उससे भारी संख्या में लोगों की जान जा रही है। स्वास्थ्य पत्रिका 'द लैंसेट' में प्रकाशित एक अध्ययन में इससे संबंधित जो ब्योरा सामने आया है, वह इसकी गंभीरता को रेखांकित करने के लिए काफी है। गौरतलब है कि जंगलों और घास के मैदानों में लगने वाली आग और प्रदूषण से सांस संबंधी बीमारियों के कारण हर वर्ष लगभग साढ़े चार लाख लोगों की जान चली जाती है। इनमें नब्बे फीसद से ज्यादा मौतें निम्न और मध्यम आयवर्ग वाले देशों में होती है। अध्ययन में आशंका जताई गई है कि जंगल में आग की घटनाओं में बढ़ोतरी के साथ-साथ मरने वालों की संख्या में भी इजाफा होता जाएगा। ऐसी समस्या से निपटने के लिए विकसित देशों की ओर से विकासशील देशों को आर्थिक और तकनीकी मदद उपलब्ध कराने की जरूरत पर जोर दिया जाता रहा है, लेकिन समृद्ध देश हर ऐसे मौके पर अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेते हैं। हैरानी की बात है कि विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में चरम विकास के दौर में भी जंगल में आग की घटनाओं से पार पाना एक चुनौती बनी हुई है। सवाल है कि जब तक इस समस्या पर प्राथमिकता के साथ काम नहीं किया जाएगा, तब तक इसके हल का रास्ता निकालना कैसे संभव होगा!

विकास के नाम पर मिली करोड़ों की धनराशि का दुरुपयोग

अपने सामने की सड़क तक बढ़ा लिए हैं। पिछली जनगणना के अनुसार देश के सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में लगभग 6.40 लाख गांव और 7,935 शहर हैं। यहां निवास करने वाली जनता को स्थानीय स्तर पर ही अपनी समस्याओं का समाधान चाहिए होता है। अधिकतर समस्याओं के समाधान की जिम्मेदारी स्थानीय सरकारों यानी पंचायतों और नगर पालिकाओं की होती है। अनेक समस्याएं बहुत साधारण होती हैं, लेकिन उनका समाधान न होने से जनता आक्रोशित हो जाती है और प्रायः मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री को उत्तरदायी मानती है।

शहरों की अनगिनत समस्याओं का तो कहना ही क्या? धनार्जन और जीविकोपार्जन के लिए लोग शहरों की तरफ भागते हैं। शहरों की बेतहाशा बढ़ती आबादी से बेतरतीब होते आवासीय क्षेत्र अतिक्रमण को जन्म दे रहे हैं। नगर निकाय जिला प्रशासन या पुलिस प्रशासन के अधिकारी इस पर ध्यान नहीं देते। औसत जनता और दुकानदार दोनों ने अपने मकान और दुकान अपने सामने की सड़क तक बढ़ा लिए हैं। पिछली जनगणना के अनुसार देश के सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में लगभग 6.40 लाख गांव और 7,935 शहर हैं। यहां निवास करने वाली जनता को स्थानीय स्तर पर ही अपनी समस्याओं का समाधान चाहिए होता है। अधिकतर समस्याओं के समाधान की जिम्मेदारी स्थानीय सरकारों यानी पंचायतों और नगर पालिकाओं की होती है। अनेक समस्याएं बहुत साधारण होती हैं, लेकिन उनका समाधान न होने से जनता आक्रोशित हो जाती है और प्रायः मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री को उत्तरदायी मानती है। इसका नतीजा उन्हें आगामी चुनावों में भुगतना पड़ता है। महात्मा गांधी और लोकनायक जयप्रकाश ग्राम स्वराज की अवधारणा के पुरोधा थे, लेकिन संविधान बनाते समय उसे स्वीकार नहीं किया गया। 1992 में संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों द्वारा ग्रामीण स्तर पर पंचायत और शहरी स्तर पर नगरपालिका सरकारों को संवैधानिक मान्यता एवं अधिकार दिए गए, जिससे गांधी और जेपी के सपने साकार हो सकें, लेकिन उन संवैधानिक संशोधनों के 32 वर्षों बाद भी स्थानीय सरकारें ऐसा कुछ नहीं कर पाई हैं, जिससे ग्रामीण और शहरी जनता को राहत मिल सके। संविधान के अनुच्छेद 243(छ) और अनुच्छेद 243(ब) क्रमशः पंचायतों और नगर पालिकाओं को आर्थिक-विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं बनाने और उन्हें लागू करने का अधिकार देते हैं। संविधान की अनुसूची-11 पंचायतों को 28 और नगर पालिकाओं को 18 क्षेत्रों में काम करने का अधिकार देती है। आखिर इसके बाद भी शहरों और गावों की समस्याएं क्यों बढ़ती जा रही हैं? पंचायतें और नगर पालिकाएं केंद्र सरकार, राज्य सरकार और कुछ बाह्य स्रोतों से पर्याप्त धन प्राप्त कर रही हैं। आज छोटी-छोटी पंचायतों को भी विकास के नाम पर करोड़ों की धनराशि भिन्न-भिन्न स्रोतों से मिलती है, पर उसका दुरुपयोग होता है। पंचायत प्रधान अपने को मिनी मुख्यमंत्री समझने लगे हैं। अनेक गांवों में वे सरकारी कर्मचारियों और बैंककर्मियों से साठगांठ करके विकास के लिए आए उस पैसे में भी हिस्सेदारी वसूलते हैं, जो केंद्र और राज्य सरकारें अनेक लोक-कल्याणकारी योजनाओं के अंतर्गत सीधे गरीबों के जनधन खाते में भेजती हैं। जितना बड़ा विकास का बजट, उतना ही बड़ा भ्रष्टाचार। इस पर कोई अंकुश नहीं लग पा रहा है, क्योंकि इसमें राजनीतिक और प्रशासनिक गठजोड़ है। अब यह किसी से छिपा नहीं कि स्थानीय चुनावों में बेतहाशा पैसा खर्च कर जनप्रतिनिधि बनने वाले विकास और कल्याण पर ध्यान देने के स्थान पर अपनी सत्ता का दुरुपयोग करके अगले चुनाव के लिए धनसंग्रह करने में लिप्त हो जाते हैं। गावों की कई समस्याओं में एक चर्चित समस्या छुट्टा-पशुओं की है, लेकिन उसे चुनाव के समय ही उछाला जाता है। क्या किसी भी पंचायत ने इस समस्या के समाधान के लिए कोई ठोस रणनीति बनाई है? उत्तर प्रदेश में योगी सरकार ने वर्ष 2023-24 में 125 करोड़ रुपये छुट्टा पशुओं के अस्थाई आवास, भोजन और औषधि के लिए आवंटित किए, पर क्या पंचायत सरकारों ने इस आवंटित धन का सदुपयोग किया, ताकि समस्या का समाधान हो सके? उनकी रुचि इसमें रहती है कि इस योजना से कितना धन स्वयं के लिए निकला जा सकता है। समय आ गया है कि इस पर विचार किया जाए कि मनरेगा जैसी योजनाएं गावों में क्यों रचनात्मक बदलाव नहीं ला पाईं? कुएं बनाना, तालाब निर्माण, सौर ऊर्जा, शौचालय निर्माण, प्रधानमंत्री आवास आदि अनेक योजनाएं गावों का स्वरूप बदल सकती हैं, पर पंचायत प्रतिनिधियों और सरकारी कर्मचारियों की उसमें रुचि कहां? क्या किसी पंचायत ने गांव में खेल-कूद, खेती, उद्योग-धंधे और कारोबार बढ़ाने के लिए कोई योजना बनाई? उलटे पराली जैसी प्रदूषण बढ़ाने वाली नई-नई समस्याएं हरियाणा, पंजाब आदि राज्यों में गंभीर हो रही हैं। क्या ग्राम पंचायतों का यह दायित्व नहीं कि अपने-अपने क्षेत्रों में इसे रोकने के उपाय करें और उसका वैकल्पिक व्यावसायिक समाधान खोजें?

रिकी पोंटिंग ने स्टीव स्मिथ और मार्नस लाबुशेन को विराट कोहली से सीखने की दी सलाह

पर्थ टेस्ट में हुए थे फ्लॉप

नई दिल्ली। भारत और ऑस्ट्रेलिया की टीमें बॉर्डर-गावस्कर ट्रॉफी के तहत पांच मैचों की टेस्ट सीरीज खेल रही हैं. सीरीज का पहला टेस्ट पर्थ में खेला गया, जिसमें मेहमान टीम इंडिया ने 295 रनों से जीत दर्ज की. पर्थ टेस्ट में ऑस्ट्रेलियाई बैटिंग की बैक बोन कहे जाने वाले स्टार बल्लेबाज स्टीव स्मिथ और मार्नस लाबुशेन फ्लॉप दिखाई दिए थे. अब रिंकी पोंटिंग ने दोनों बल्लेबाजों को विराट कोहली से सीखने की सलाह दी। पोंटिंग ने स्मिथ और लाबुशेन से कहा कि आप विराट कोहली के जैसे अपने खेल पर भरोसा करिए. पर्थ टेस्ट की दोनों पारियों में स्मिथ ने क्रमशः 00 और 17 रन स्कोर किए थे. इसके अलावा मार्नस लाबुशेन ने दोनों पारियों में क्रमशः 02 और 03 रन बनाए थे। आईसीसी रिव्यू पर बात करते हुए पोंटिंग ने कहा, पर्थ टेस्ट में मार्नस सभी बल्लेबाजों से ज्यादा संकोचपूर्ण दिखाई दिए. हां, वहां मुश्किल विकेट पर हाई क्वालिटी बॉलिंग थी, लेकिन उन्हें इसे पलटने के लिए रास्ता ढूंढना होगा। बता दें कि पर्थ टेस्ट में खेलते हुए विराट कोहली पहली पारी में सिर्फ 05 रन पर आउट हो गए थे, लेकिन फिर दूसरी पारी में उन्होंने शानदार शतक लगाया, जो उनका 30वां टेस्ट शतक रहा। पोंटिंग ने आगे कहा, वह (कोहली) विपक्ष से मुकाबला करने की कोशिश से दूर हो गए और अपनी ताकत पर ध्यान दिया. मार्नस और स्मिथ को भी यही करने की जरूरत है।

अपने रास्ते तलाशिए और मजबूत इरादे दिखाइए। ऑस्ट्रेलिया के पूर्व कप्तान रिंकी पोंटिंग ने आगे कहा, आपके रिस्क लेने का रास्ता तलाशा होगा और उन पर डालना होगा क्योंकि आप दुनिया के बुमराह को जानते हैं... वो आपको आसानी से रन बनाने का मौके नहीं देंगे. जब वे ऐसा करते हैं, तो आपको उन पर हमला करने और उन पर कुछ दबाव डालने के लिए तैयार रहना होगा।

अंडर-19 एशिया कप में पाकिस्तान ने भारत को 43 रन से हराया

नई दिल्ली। पाकिस्तान ने अंडर-19 एशिया कप में भारत को 43 रन से हरा दिया। दुबई में खेले गए इस मुकाबले में पाकिस्तान ने टॉस जीतकर पहले बैटिंग करते हुए 50 ओवर में 7 विकेट खोकर 281 रन बनाए। शहजैब खान ने सबसे ज्यादा 159 रन बनाए। जवाब में भारतीय टीम 47.1 ओवर में 238 रन के स्कोर पर ऑलआउट हो गई। निखिल कुमार ने 67 रन की पारी खेली। पाकिस्तान की ओर से अली रजा ने सबसे ज्यादा 3 विकेट लिए। जबकि फहम-सुभान को 2-2 विकेट मिला। भारत की ओर से समर्थ नागराज ने 3 विकेट झटके। जबकि आयुष म्हात्रे को 2 विकेट मिला। ग्रुप-ए में यह दोनों टीमों का पहला मैच था। भारत का दूसरा मुकाबला जापान से 2 दिसंबर को होगा।

इंग्लैंड पहली पारी में 499 रन पर ऑलआउट तीसरे दिन न्यूजीलैंड का स्कोर 155/6

केन विलियम्सन के टेस्ट में 9 हजार रन पूरे

क्राइस्टचर्च। इंग्लैंड और न्यूजीलैंड के बीच क्राइस्टचर्च में चल रहे टेस्ट मैच में तीसरे दिन का खेल समाप्त हो गया है। स्टंप्स तक कीवियों ने 6 विकेट खोकर 155 रन बना लिए है। डेरियल मिचेल 31 और नाथन स्मिथ 1 रन बना कर नाबाद हैं। इंग्लिश की पहली पारी में 499 रन पर ऑलआउट हो गई है, जबकि न्यूजीलैंड ने 348 रन बनाए थे। इंग्लैंड टीम ने पहली पारी के बाद 151 रन की बढ़त हासिल की थी। इंग्लैंड ने दिन की शुरुआत 319/5 के स्कोर से की। विलियम्सन की फिफ्टी, 9 हजार टेस्ट रन पूरे केन विलियम्सन ने 61 रन बना कर आउट हो गए। वह न्यूजीलैंड की ओर से टेस्ट में 9000 रन पूरा करने वाले पहले क्रिकेटर भी बनें। वहीं रचिन रविंद्र भी 38 गेंदों पर 24 रन बना कर पवेलियन लौटे। कप्तान टॉम लैथम एक और ड्वोन कॉन्वे 8 रन बनाकर आउट हुए। इंग्लैंड की ओर से क्रिस वोक्स और ब्राइडेन क्रेस को 3-3 विकेट मिले। इंग्लैंड 499 रन पर ऑलआउट, हैरी ब्रूक ने 171 रन बनाए इंग्लैंड की टीम ने लंच ब्रेक तक 8 विकेट पर 459 रन बना लिए थे। इसमें हैरी ब्रूक 171 रन बनाकर आउट हुए। उन्हें मैट हेनरी ने विकेटकीपर टॉम ब्लेंडल के हाथों कैच कराया। कप्तान बेन स्टोक्स ने 80 रन की पारी खेली, जबकि गॉस एटकिंसन ने 48 और ब्रायडन केस ने नाबाद 33 रन बनाए। मैट हेनरी ने 4 विकेट झटके। नाथन स्मिथ ने 3 विकेट झटके। टिम साउदी को 2 विकेट मिले।

दक्षिण अफ्रीका ने श्रीलंका को पहला टेस्ट हराकर डबलूटीसी प्वाइंट्स टेबल में किया बड़ा बदलाव

दक्षिण अफ्रीका ने पहले टेस्ट में श्रीलंका को 233 रनों से करारी शिकस्त दी. इस जीत के साथ अफ्रीका ने वर्ल्ड टेस्ट चैंपियनशिप के प्वाइंट्स टेबल में बड़ा बदलाव कर दिया. तो क्या इस बदलाव से टीम इंडिया को नुकसान पहुंचा? आइए जानते हैं कि पहले टेस्ट में दक्षिण अफ्रीका की जीत और श्रीलंका की हार से टीम इंडिया को क्या नुकसान हुआ और अब प्वाइंट्स टेबल कैसा दिख रहा है. बता दें कि दक्षिण अफ्रीका और श्रीलंका के बीच दो मैचों की टेस्ट सीरीज खेली जा रही है. सीरीज के पहले मुकाबले में जीत हासिल कर अफ्रीका ने खुद को वर्ल्ड टेस्ट चैंपियनशिप के प्वाइंट्स टेबल में दूसरे पायदान पर काबिज कर लिया है. इससे पहले अफ्रीका पांचवें पायदान पर था। अफ्रीका की जीत से टीम इंडिया को किसी भी तरह का कोई नुकसान नहीं हुआ है. भारतीय टीम अफ्रीका-श्रीलंका टेस्ट से पहले भी अव्वल नंबर पर थी और अभी भी पहले ही नंबर पर काबिज है. टीम इंडिया के पास सबसे ज्यादा 61.11 का जीत प्रतिशत मौजूद है. टीम इंडिया 2023-25 वर्ल्ड टेस्ट चैंपियनशिप चक्र में 15 टेस्ट खेल लिए हैं, जिसमें 9 में जीत दर्ज की है। वहीं 5 मुकाबले गंवाए और 1 ड्रॉ पर खत्म हुआ। जीत के बाद अफ्रीका दूसरे और ऑस्ट्रेलिया की टीम तीसरे पायदान पर पहुंच गई है. श्रीलंका के खिलाफ जीत हासिल कर अफ्रीका का जीत प्रतिशत 59.26 का हो गया है. फिर तीसरे पायदान पर मौजूद ऑस्ट्रेलिया का जीत प्रतिशत 57.69 का है. इसके बाद न्यूजीलैंड की टीम 54.55 प्रतिशत जीत के साथ चौथे नंबर पर है।

फिर दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ हारने वाली श्रीलंका टीम प्वाइंट्स टेबल में पांचवें पायदान पर है. श्रीलंका के पास जीत का प्रतिशत 50 का है. श्रीलंका ने अब तक इस चक्र में 10 टेस्ट खेल लिए हैं. इन मैचों में टीम ने 5 में जीत दर्ज की और 5 मुकाबले गंवाए हैं।

व्यापार

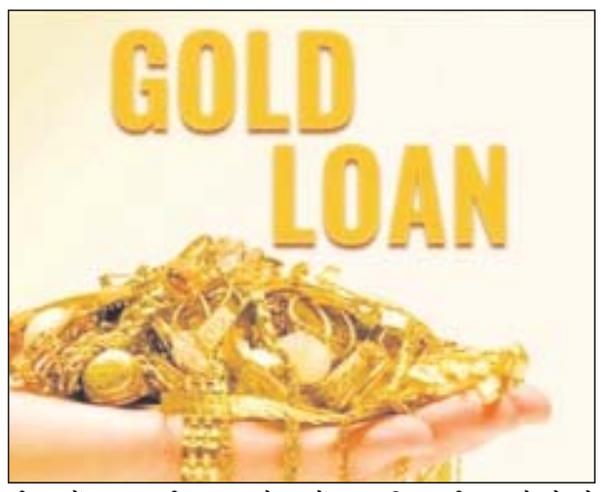

7 महीने में 50 प्रतिशत बढ़ा गोल्ड लोन, वित्त वर्ष 2024-25 में अक्टूबर तक 1.54 करोड़ लोन दिया

नई दिल्ली। चालू वित्त वर्ष यानी 2024-25 के पहले सात महीनों में गोल्ड लोन में 56 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। शुक्रवार को आरबीआई द्वारा जारी बैंक क्रेडिट के सेक्टोरल डिप्लॉयमेंट के आंकड़ों से पता चलता है कि 18 अक्टूबर, 2024 तक 1,54,282 करोड़ रुपए का गोल्ड लोन बांटा जा चुका है। वहीं वित्त वर्ष 2023-24 के शुरुआती 7 महीने में कुल 98.8 हजार करोड़ रुपए का लोन बांटा गया था। वहीं पिछले वित्त वर्ष में बैंक और NBFC s द्वारा कुल 1,02,562 करोड़ रुपए का गोल्ड लोन बांटा गया था। ये इस वित्त वर्ष के शुरुआती 7 महीनों में बांटे गए लोन से 50 प्रतिशत कम है। पर्सनल लोन में सालाना आधार पर 5.6 प्रतिशत की ग्रोथ देखने को मिली है। वहीं बैंकों लेने की दर में 12.1त्न की सालाना ग्रोथ देखने को मिली है। वहीं इस वित्त वर्ष के पहले 7 महीनों में क्रेडिट कार्ड लोन में 9.2 प्रतिशत की बढ़त देखने को मिलेगी।

एक्सर्ट्स के अनुसार गोल्ड लोन में ये बढ़ोतरी का कारण गोल्ड की कीमतों का बढ़ना हो सकता है। इसके अलावा गोल्ड लोन आसानी और कम ब्याज पर मिल जाला है। वहीं कुछ विश्लेषक गोल्ड लोन की बढ़ती मांग को वित्तीय संकट का संकेत भी मानते हैं।

कुछ बातें गोल्ड लोन लेने से पहले कई पहलुओं पर गौर करना जरूरी है। इनमें ब्याज दर, लोन-टू-वैल्यू रेशियो, प्रोसेसिंग फीस और कर्ज चुकाने की शर्त शामिल हैं। इन सबसे बढ़कर आपके द्वारा गिरवी रखे गए सोने की सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण है। ऐसे में आपको प्रतिष्ठित लेंडर (यानी गोल्ड लोन देने वाली फर्म) को चुनना चाहिए, जिनके पास सुरक्षित स्टोरेज या लॉकर फैसिलिटी या फिर इंश्योर्ड वॉल्ट हो।

एनएसई ने कुछ इंडेक्स डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स एक्सपायरी में बदलाव किया

नई दिल्ली। नेशनल स्टॉक एक्सचेंज ने कुछ इंडेक्स डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स के लिए एक्सपायरी डे में बदलाव का ऐलान किया है। बैंक निफ्टी का वीकली और क्वार्टरली कॉन्ट्रैक्ट की एक्सपायरी अब महीने की आखिरी बुधवार की बजाय आखिरी गुरुवार को एक्सपायर को होगी। फिन निफ्टी का मंथली कॉन्ट्रैक्ट्स अब लास्ट मंगलवार के बजाय महीने के अंतिम गुरुवार को खत्म होगा।

वहीं, मिड निफ्टी का मंथली कॉन्ट्रैक्ट्स अब अंतिम सोमवार के बजाय महीने के अंतिम गुरुवार को खत्म होगा। इसके साथ ही निफ्टी नेक्स्ट 50 का मंथली कॉन्ट्रैक्ट्स अब महीने के अंतिम शुक्रवार के बजाय अंतिम गुरुवार को खत्म होगा। यह बदलाव 1 जनवरी 2025 से लागू होंगे। हालांकि, निफ्टी के मंथली, वीकली, क्वार्टरली और हाफ-इयरली कॉन्ट्रैक्ट्स के एक्सपायरी डे में किसी भी तरह का बदलाव नहीं किया है।

बीएसई भी कॉन्ट्रैक्ट्स के एक्सपायरी डे में कर रहा बदलाव

इससे पहले गुरुवार को बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज ने सेंसेक्स, बैंकेक्स और सेंसेक्स 50 इंडेक्स डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स के एक्सपायरी डे में बदलाव करने का ऐलान किया था। वीकली सेंसेक्स डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स शुक्रवार की जगह अब हर हफ्ते के मंगलवार को एक्सपायर होगा। बेंचमार्क इंडेक्स के लिए मंथली कॉन्ट्रैक्ट में भी यही बदलाव होगा।

मंथली सेगमेंट में बैंकेक्स कॉन्ट्रैक्ट अब सोमवार के बजाय महीने के लास्ट मंगलवार को खत्म होगा। सेंसेक्स 50 के लिए कॉन्ट्रैक्ट महीने के अंतिम गुरुवार की जगह मंगलवार को एक्सपायर होगा। इसके अलावा सेंसेक्स का क्वार्टरली और सेमी-एनुअल कॉन्ट्रैक्ट की एक्सपायरी शुक्रवार के बजाय महीने के अंतिम मंगलवार को होगी। बीएसई के भी यह बदलाव 1 जनवरी 2025 से लागू होंगे। मार्केट रेगुलेटर सेबी के आदेश के बाद नेशनल स्टॉक एक्सचेंज ने अपने सभी पांच इंडेक्स डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स के लॉट साइज को बढ़ा चुका है। निफ्टी 50 के लॉट साइज को 25 से बढ़ाकर 75 कर दिया गया है, जो 3 गुना की बढ़ोतरी है।

निफ्टी बैंक का लॉट साइज 15 से बढ़ाकर 30 कर दिया है। सेबी को उम्मीद है कि इस कदम से रिटेल निवेशकों का F&O में पार्टिसिपेशन कम होगा। 20 नवंबर 2024 से से नए लॉट साइज लागू हो चुके हैं।

HUL, विप्रो ने रोजाना काम आने वाले कई प्रोडक्ट्स किए महंगे

नई दिल्ली। रोजाना के इस्तेमाल का सामान बनाने वाली एचयूएल और विप्रो जैसी प्रमुख कंपनियों ने पामतेल कीमतों में बढ़ोतरी के असर को कम करने के लिए साबुन की कीमतों में लगभग सात-आठ फीसदी की बढ़ोतरी की है. पामतेल, साबुन उत्पाद का एक प्रमुख कच्चा माल है. एचयूएल और टाटा कंज्यूमर जैसी कंपनियों ने हाल ही में चाय की कीमतों में भी बढ़ोतरी की है, क्योंकि अनियमित मौसम के कारण उत्पादन में गिरावट आई है। सितंबर तिमाही के नतीजों के दौरान कई लिस्टेड कंपनियों ने अपने मार्जिन को सुरक्षित रखने के लिए चालू तिमाही में साबुन की कीमतों में बढ़ोतरी का संकेत दिया. ये कंपनियां पामतेल, कॉफी और कोको जैसे कमोडिटी की लागत में बढ़ोतरी का सामना कर रही थीं।

साबुन बनाने में प्रमुख कच्चे माल की कीमतों में इजाफा- विप्रो

विप्रो कंज्यूमर केयर के मुख्य कार्यपालक अधिकारी (सीईओ) नीरज खत्री ने कहा, ÷साबुन बनाने में प्रमुख कच्चे माल की कीमतों में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है. इसमें इस साल की शुरुआत से 30 फीसदी से अधिक की बढ़ोतरी हुई है. इसके चलते सभी प्रमुख कारोबारियों ने बढ़ोतरी को आंशिक रूप से संतुलित करने के लिए लगभग सात-आठ फीसदी की मूल्य बढ़ोतरी की है. हमने कीमतें बढ़ाकर इन बाजार रुझानों के मुताबिक ही काम किया है.÷ अजीम प्रेमजी के नेतृत्व वाली विप्रो एंटरप्राइजेज की यूनिट विप्रो के पास संतूर जैसे ब्रांड हैं। दिग्गज कंपनी हिंदुस्तान यूनिलीवर लिमिटेड (एचयूएल) ने चाय और त्वचा की सफाई करने वाले उत्पादों की कीमतों में भी बढ़ोतरी की है. इनमें डव, लक्स, लाइफबॉय, लिरिल, पीयर्स, रेक्सोना आदि ब्रांड के तहत इसका साबुन कारोबार शामिल है. एक डिस्ट्रीब्यूटर के मुताबिक एचयूएल के और पर्सनल केयर उत्पादों की कीमतें भी बढ़ गई हैं।

पामतेल के दाम कितने बढ़े हैं

इंपोर्ट ड्यूटी बढ़ने के साथ-साथ ग्लोबल कीमतों में बढ़ोतरी की वजह से सितंबर के मध्य से पामतेल की कीमतों में लगभग 35-40 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है. पाम तेल मुख्य रूप से इंडोनेशिया और मलेशिया से इंपोर्ट किया जाता है. मौजूदा समय में पामतेल की कीमत लगभग 1370 रुपये प्रति 10 किलोग्राम है. नुवामा इंस्टीट्यूशनल इक्विटीज के कार्यकारी निदेशक (रिसर्च) अबनीश रॉय के मुताबिक एचयूएल के बाद, अब ज्यादातर कंपनियां कीमतों में बढ़ोतरी करेंगी।

मल्टीबैगर PSU स्टॉक ने दिया 2100 प्रतिशत का रिटर्न

नई दिल्ली। सरकारी कंपनियों ने अपने निवेशकों को बीते कुछ वर्षों में कमाल का रिटर्न दिया है. हालांकि, कुछ दिनों से शेयर बाजार में गिरावट के चलते इन कंपनियों के भी शेयर गिरे हैं. लेकिन, अब बाजार में सुधार के आसार दिख रहे हैं और लोगों को उम्मीद है कि इस सुधार में कुछ पीएसयू स्टॉक्स में भी हरियाली दिखेगी. खैर, आज हम आपको एक ऐसे पीएसयू स्टॉक के बारे में बताएंगे, जिसने बीते कुछ वर्षों में अपने निवेशकों को 2100 पर्सेंट से ज्यादा का रिटर्न दिया है. इसके अलावा, इस सरकारी कंपनी को हाल ही में एक बड़ा ऑर्डर भी मिला है।

कौन सी है वह कंपनी

हम जिस सरकारी कंपनी की बात कर रहे हैं, उसका नाम है रेल विकास निगम लिमिटेड दरअसल, इस कंपनी ने पंजाब स्टेट पावर कॉरपोरेशन लिमिटेड के एक पावर इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट के लिए सबसे कम की बोली लगाकर यह प्रोजेक्ट अपने नाम कर लिया है. कंपनी को 643.57 करोड़ रुपये के वैल्यू वाला प्रोजेक्ट मिला है.

हाल ही में आरवीएनएल ने स्टॉक मार्केट को जानकारी दी कि प्रोजेक्ट पंजाब में एचटी/एलटी इंफ्रास्ट्रक्चर लॉस रिडक्शन वर्क्स के एग्जीक्यूशन को लेकर पैकेज-3 सेंट्रल जोन के लिए डिस्ट्रीब्यूशन इंफ्रास्ट्रक्चर वर्क के लिए है. आरवीएनएल यह काम रिवैंप्ड डिस्ट्रीब्यूशन सेक्टर स्कीम के तहत करेगी. कंपनी को यह काम 24 महीनों के अंदर करना होगा. एक्सपर्ट्स मानते हैं कि इस खबर का असर सोमवार को बाजार खुलने पर इस शेयर में देखने को मिल सकता है।

रेल विकास निगम लिमिटेड ने अपने निवेशकों को बंपर रिटर्न दिया है. 12 अप्रैल 2019 को इस कंपनी के एक शेयर की कीमत 19.75 रुपये थी. 29 नवंबर 2024 को इस कंपनी के एक शेयर की कीमत 434.95 रुपये है. आरवीएनएल के 52 वीक हाई की बात करें तो ये 647 रुपये है. वहीं 52 वीक लो 162.10 रुपये है. इस कंपनी का मार्केट कैप 90,876 करोड़ रुपये है. वहीं इस स्टॉक का पीई 71 है. कंपनी का आरओसीई 18.7 फीसदी है. जबकि, बुक वैल्यू 38.1 रुपये है. आरओई की बात करें तो आरवीएनएल का ऋह्रश्व 20.4 फीसदी है. शेयर के फेस वैल्यू की बात करें 10 रुपये है.

जैतहरी को स्वच्छ एवं सुंदर बनाने के साथ ही शैक्षणिक क्षेत्र में नगर परिषद ने किए कई कार्य: अनिल गुप्ता

-जैतहरी-वेंकटनगर मुख्य मार्ग में स्ट्रीट लाइट का शुभारंभ

(ब्यूरो राजेश शिवहरे)

अनूपपुर। मध्यप्रदेश की सबसे अंतिम नगर परिषद जैतहरी अपने सीमित संसाधन के बावजूद दृढ़ इच्छा शक्ति व विकास कार्यो का नया इतिहास रचने नित्य नए कार्यो को साकार करते हुए जैतहरी नगर को संभाग का उत्कृष्ट नगर बनाने संकल्पित है। जैतहरी नगर परिषद् के युवा अध्यक्ष उमंग अनिल गुप्ता ने 29 नवम्बर को अनूपपुर-वेंकटनगर मुख्य मार्ग पर महानगर जैसी स्ट्रीट लाइट की व्यवस्था कर जैतहरी की तस्वीर बदलने की कड़ी मे महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

29 नवम्बर को गौरव पथ में आयोजित सादे किन्तु गरिमामयी समारोह आयोजित कर अनूपपुर-वेंकटनगर मुख्य मार्ग में स्ट्रीट लाइट का शुभारंभ कार्यक्रम आयोजित किया।कार्यक्रम के मुख्य अतिथि भारतीय जनता पार्टी के पूर्व जिला अध्यक्ष व विन्ध्य विकास प्राधिकरण के पूर्व उपाध्यक्ष अनिल कुमार गुप्ता,विशिष्ट अतिथि पूर्व अध्यक्ष नगर परिषद् सुनीता जैन,सभापति एवं पूर्व मण्डी अध्यक्ष कैलाश सिंह मरावी तथा अध्यक्षता उमंग अनिल गुप्ता ने किया।समारोह का सफल संचालन विधायक प्रतिनिधि नरेश नापित ने किया। इस अवसर पर कार्यक्रम के मुख्य अतिथि अनिल कुमार गुप्ता ने कहा नगर को स्वच्छ व सुन्दर बनाने के साथ ही शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराने भाजपा की परिषद ने पूर्व राष्ट्रपति डा.ए.पी.जे.अब्दुल कलाम स्मार्ट क्लास एवं लायब्रेरी तथा कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रारम्भ कराकर प्रदेश के नगरीय निकायों में जैतहरी ने नया

इतिहास रचा है। जैतहरी नगर की जनता व जनप्रतिनिधि का सम्मान मध्यप्रदेश की सरकार ने स्वच्छता ही सेवा है,पखवाडा में म.प्र. पूरे प्रदेश में प्रथम स्थान अर्जित कर जैतहरी नगर के साथ ही शहडोल संभाग को गौरान्वित किया है।नगर की जनता का आर्शीवाद ही नगर को सर्वोत्तम स्थान दिलाया है। पूर्व नगर परिषद अध्यक्ष सुनीता जैन ने नगर परिषद जैतहरी के अध्यक्ष उमंग गुप्ता की प्रशंसा करते हुए कहा की नए विचार व नए संकल्प से ही विकास के अद्भुत कार्य हो रहे हैं। नगर परिषद के अध्यक्ष उमंग गुप्ता ने कहा जनता का आशीर्वाद व मार्ग दर्शन से जैतहरी में पेयजल,स्वच्छता व स्ट्रीट लाइट के साथ ही नगर में कई ब्यूटी प्वाइंट,पार्क निर्माण,वेज-नानवेज चौपाटी,सड़कों का निर्माण स्मार्ट क्लास व लायब्रेरी सहित अनेक कार्य अल्प समय में मेरी परिषद ने किया है। समारोह में सिद्धार्थ सिंह (राजा), उत्तमचन्द गुप्ता, बद्रीनारायण गुप्ता, नाथूराम राठौर, दिनेश कोल, लाल प्रताप सिंह (लाला), महेन्द्र सोनी पूर्व पार्षद, अशोक राठौर पूर्व पार्षद, मो.जलील, प्रेमानंद द्विवेदी, हरीश देवानी, अनिल प्रजापति, मो.हुसैन बोहरा, अमर सिंह, मनीष गुप्ता, के.के. अग्रवाल, राहुल गुप्ता, सुनील गुप्ता, लाल बाबू अवस्थी, सुशील गुप्ता, प्रकाश गुप्ता, शिव सराफ, लक्ष्मी गुप्ता, पुरूषोत्तम गुप्ता, संतोष अग्रवाल, संदीप गुप्ता, राजू कनकने, कुंजन वर्मा पूर्व पार्षद, मनोज ताम्रकार, राजा गुप्ता, मोहित मोटवानी, नगर परिषद अधिकारी, कर्मचारी के साथ नगर के अन्य गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे।

राजस्व महाअभियान 3.0

राजस्व प्रकरणों का मौके पर पहुंच पटवारी कर रहे निराकरण

(ब्यूरो राजेश शिवहरे)

अनूपपुर। राजस्व प्रकरणों के निराकरण के लिए राज्य शासन द्वारा चलाये जा रहे राजस्व महा-अभियान 3.0 के तहत कलेक्टर हर्षल पंचोली के निर्देशानुसार राजस्व अमला डोर टू डोर मौके पर पहुंच कर तथा जिला प्रशासन द्वारा लगाई जा रहे राजस्व शिविर के माध्यम से लंबित राजस्व प्रकरणों का निराकरण का कार्य सुनिश्चित किया जा रहा हैं। अभियान के अंतर्गत जिले में वर्तमान की स्थिति में कुल 13509 राजस्व प्रकरणों का निराकरण किया गया है। जिसमें से नक्शा तरमीम के 10309 प्रकरण, नामांतरण के 597 प्रकरण, बंटवारे के 224 प्रकरण, अभिलेख सुधार के 16 तथा 2363 किसानों के आरओआर लिंक किए गए हैं।

राजस्व महा-अभियान 3.0, 15 नवम्बर से शुरू किया गया है, जो 15 दिसम्बर 2024 तक चलेगा। राजस्व महा-अभियान 3.0 में समग्र का आधार से ई केवाईसी, खसरे की समग्र आधार से लिंकिंग, फार्मर रजिस्ट्री का क्रियान्वयन, नशे का तरमीम, ग्रामों में बी-1 का वचन, भूमि का सीमांकन, फौती नामांतरण के प्रकरणों का चिन्हांकन, पीएम किसान सम्मान निधि के पात्र कृषकों की ई-केवाईसी, नए राजस्व प्रकरणों को आरसीएमएस पर दर्ज करना, राजस्व न्यायालय में समय सीमा पर लंबित प्रकरणों का निराकरण आदि गतिविधियां संचालित की जा रही है। किसानों, ग्रामीणों तथा नागरिकों से अभियान का लाभ लेकर राजस्व संबंधी मामलो के निराकरण की अपील की गई है।

अवैध मादक पदार्थ गांजा जप्त कर पुलिस चौकी फुनगा द्वारा किया गया 02 आरोपियों के विरुद्ध मामला पंजीबद्ध

अनूपपुर। पुलिस अधीक्षक मोती उर रहमान के निर्देश पर जिले में अवैध मादक पदार्थों के कारोबार के विरूद्ध अवैध नशे पर नियंत्रण हेतु निरंतर कार्यवाही के निर्देश दिए गए हैं। दिनांक 29.11.24 को पुलिस चौकी फुनगा द्वारा मुखबिर की सूचना पर धुर्वासिन - रक्शा रोड तिराहा पर आरोपी गिरधारी पटेल पिता जयपाल प्रसाद पटेल उम्र 53 वर्ष निवासी ग्राम रक्शा चौकी फुनगा जिला अनूपपुर को रेड कार्यवाही कर 798 ग्राम अवैध मादक पदार्थ गांजा कीमती 8000/- रूपये को जप्त कर अपराध क्रमांक 397/24 धारा 8/20 बी एन.डी.पी. एस. एक्ट पंजीबद्ध कर आरोपी को गिरफ्तार किया गया है। उक्त मादक पदार्थ की बरामदगी के बाद खरीदी का पता करते हुए पूछताछ पर आरोपी गिरधारी पटेल द्वारा इसे आरोपी मोबाइल नंबर 7389****41 के धारक निवासी ज़ैतहरी जिला अनूपपुर से खरीद कर लाया जाना बताया जिससे उक्त व्यक्ति के विरुद्ध भी मामला पंजीकृत किया जाकर अन्य बिंदुओं पर अग्रिम विवेचना की जा रही है। उक्त कार्यवाही में उपनिरीक्षक सुमित कौशिक, सहित अन्य पुलिस कर्मियों की भूमिका रही है।

डीजीपी द्वारा उप निरीक्षक राधेश्याम वर्मा को ''के.एफ.रूस्तमजी'' पुरस्कार से सम्मानित किया गया

- पुलिस अधीक्षक देवास एवं अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक ने दी शुभकामनाएं

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

देवास। थाना पीपलरवां के अपराध क्रमांक 133/2014 धारा 363,366 भादवि के तहत ग्राम मुण्डला दांगी में 12 मई 2014 को 03 नाबालिग बालिकाओं उम्र 5 एवं 8 वर्ष का अज्ञात व्यक्तियों द्वारा अपहरण कर लिया गया था। इस घटना के बाद से पुलिस टीम द्वारा लगातार बच्चियों की तलाश हेतु विशेष प्रयास किए गए। वर्ष 2014 से लगातार बच्चियों की पतारसी के लिए मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश और गुजरात राज्यों में सघन अभियान चलाया गया। इन राज्यों में पोस्टर चस्पा करने और सूचना जुटाने के हरसंभव प्रयास किए गए लेकिन प्रारंभिक चरण में कोई सफलता प्राप्त नहीं हुई। वर्ष 2021 में बच्चियों की पतारसी के लिए एक विशेष टीम गठित की गई। इस टीम ने मध्यप्रदेश, राजस्थान और

महाराष्ट्र में मुखबिर तंत्र को सक्रिय किया। उप निरीक्षक राधेश्याम वर्मा और उनकी टीम की सूझबूझ से 07 वर्षो के बाद 03 नाबालिग बालिकाओं में से 02 बालिकाओं को भीलवाड़ा, राजस्थान और 01 बालिका को नागपुर, महाराष्ट्र से सकुशल दस्तयाब किया गया। दस्तयाब की गई बालिकाओं को उनके माता-पिता के सुपुर्द किया गया। 07 साल बाद अपनी बच्चियों को पाकर परिजनों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

इस उत्कृष्ट कार्य के लिए मध्यप्रदेश पुलिस महानिदेशक सुधीर कुमार सक्सेना द्वारा उप निरीक्षक राधेश्याम वर्मा को विशिष्ट श्रेणी के ''के.एफ.रूस्तमजी'' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उप निरीक्षक राधेश्याम वर्मा और उनकी टीम के अथक प्रयास और समर्पण ने न केवल बच्चियों को सुरक्षित घर पहुँचाया बल्कि पुलिस विभाग की सकारात्मक छवि को और मजबूत किया है।

पुलिस अधीक्षक देवास पुनीत गेहलोद द्वारा राधेश्याम वर्मा को ''के.एफ.रूस्तमजी'' पुरस्कार से सम्मानित होने पर देवास पुलिस परिवार की ओर से शुभकामनाएं प्रेषित की गईं एवं उनके उज्जवल भविष्य की कामना की गई।

अपर मुख्य सचिव अनुपम राजन ने देवास जिले के रालामंडल में नव निर्मित एग्रोस्पेस स्टीडिंग इंटीग्रेटेड पैक हाउस का अवलोकन किया

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

देवास। अपर मुख्य सचिव अनुपम राजन ने आज उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग द्वारा देवास जिले के रालामंडल गाँव में नव निर्मित एग्रोस्पेस स्टीडिंग इंटीग्रेटेड पैक हाउस का अवलोकन किया। भ्रमण के दौरान उन्होंने एक -एक तकनीकी को समझा। उक्त पैक हाउस को उद्यानिकी फसलों तथा किसानों के लिए किस प्रकार से लाभदायक होगा। इस संबंध में पुणे तथा नासिक से आये होर्टिकोल्ड के तकनीकी के एक्सपर्ट अधिकारी विकास घोड़के तथा मुर्गेस से चर्चा करते हुए पूरी तकनीक को समझा।

इस दौरान नव निर्मित एग्रोस्पेस स्टीडिंग इंटीग्रेटेड पैक हाउस के राजेश जैन तथा रौनक जैन ने बताया कि पैक हाउस में प्री-कूलिंग यूनिट, सोर्टिंग -ग्रेडिंग एरिया, कोल्ड स्टोरेज, सीताफल के पल्प निकालने की सुविधा से लेकर उनके संग्रहण की विभिन्न तापक्रमों की सुविधाएं हैं। यहाँ तक कि माइनस 22 डिग्री सेंटिग्रेड तक तापक्रम प्रबंधन की सुविधाएं इंटेग्रेटेड पैक हाउस के

अंतर्गत है। साथ ही इंदौर और उज्जैन संभाग के विभिन्न जिलों के किसानों की फसलों के साथ -साथ प्रदेश के किसानों के लिए भी ये अधोसंरचना लाभदायक सिद्ध होगी, चूंकि उद्यानिकी फसलें जल्दी खराब हो जाती है और उनकी शोर्टिंग और ग्रेडिंग नहीं हो पाने से तथा उचित तापक्रम पर नहीं रखने से उत्पाद खराब हो जाते हैं। एग्रोस्पेस स्टीडिंग इंटेग्रेटेड पैक हाउस उद्यानिकी की विभिन्न फसलों, हरी मिर्ची, मटर, पालक, टमाटर अनार अमरुद आदि फसलों के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। इस अवसर पर संयुक्त संचालक उद्यानिकी इंदौर संभाग डी आर. जाटव, संयुक्त संचालक उज्जैन संभाग आशीष कनेश एवं उपसंचालक उद्यानिकी जिला देवास पंकज शर्मा उपस्थित थे।

अमरकंटक स्थित मैकल पार्क का कलेक्टर ने किया निरीक्षण

– पार्क में पर्यटकों को आकर्षित करने गतिविधियों के आयोजन के दिए निर्देश

अनूपपुर। कलेक्टर हर्षल पंचोली ने शुक्रवार को अमरकंटक के मैकल पार्क

का निरीक्षण किया। निरीक्षण के दौरान उन्होंने मैकल पार्क में पर्यटकों को आकर्षित करने हेतु एडवेंचर गतिविधियों के संबंध मे निर्देश दिए। निरीक्षण के दौरान पुलिस अधीक्षक मोती उर रहमान, जिला पंचायत के मुख्य कार्यपालन अधिकारी तन्मय वशिष्ठ शर्मा, अनुविभागीय राजस्व अधिकारी पुष्पराजगढ़ सुधाकर सिंह बघेल, जन अभियान परिषद के जिला समन्वयक, नगर परिषद अमरकंटक के मुख्य नगरपालिका अधिकारी भूपेन्द्र सिंह उपस्थित थे।

मदाखलत अमले ने महाराज बाड़े से हटाया अस्थाई अतिक्रमण

ग्वालियर। नगर निगम के मदाखलत अमले द्वारा सुगम यातायात एवं नागरिकों की सुविधा के लिए निरंतर अभियान चलाकर अतिक्रमण हटाने की कार्रवाई की जा रही है। प्रभारी उपायुक्त अतिबल सिंह यादव ने शहर के सभी दुकानदार, व्यवसाय एवं फुटपाथ व ठेले पर व्यवसाय करने वाले व्यापारियों से आग्रह किया है कि वह रोड को अवरुद्ध कर व्यापार ना करें तथा ठेले होकर जोन में ही खड़े करें अन्यथा उनके खिलाफनियम अनुसार कार्रवाई की जाएगी। मदाखलत अधिकारी केशव सिंह ने बताया कि शहर में सुगम यातायात हो इसके लिए प्रतिदिन यातायात में बाधक अतिक्रमण को हटाने की कार्यवाही की जा रही है। जिसके तहत शनिवार को महाराज बाड़ा

क्षेत्र से , नजर मार्केट से, सुभाष मार्केट , टोपी बाजार आदि स्थानों पर लगे हाथ ठेले व फ्टे वालों को हटाया गया।

सीएनडी वेस्ट फैलाने पर वसूला जुर्माना

ग्वालियर। शहर में बढ़ रहे प्रदूषण को रोकने के लिए नगर निगम द्वारा नियमित रूप से कार्रवाई की जा रही है। ग्वालियर शहर की चारों विधानसभाओं में नगर निगम की भवन शाखा द्वारा निर्माण स्थलों का निरीक्षण कर सीएनडी वेस्ट फैलाने वालों एवं ग्रीन नेट नहीं लगाने वालों पर जुर्माने की कार्रवाई की गई। निगम आयुक्त अमन वैष्णव के निर्देश पर भवन शाखा के सभी भवन अधिकारियों एवं क्षेत्रीय

अधिकारियों द्वारा उनके क्षेत्र में चल रहे भवन निर्माण कार्य स्थलों का शनिवार को निरीक्षण किया गया। निरीक्षण के दौरान क्षेत्र क्रमांक 8 के जोनल अधिकारी राजेश भदौरिया ने मार्केट चौराहा डीडी नगर में भवन सामग्री सड़क पर डालकर यातायात को अवरोध करनेएवं प्रदूषण फैलाने पर कार्रवाई कर 35 हजार रुपए का जुर्माना वसूला है।

आमजन को दिलाई स्वच्छता की शपथ

ग्वालियर । स्वच्छता सर्वेक्षण 2024 के अंतर्गत स्वच्छता के विभिन्न मापदण्डों को पूर्ण करने के लिए सभी कार्यालयों सहित कॉलोनियों में आमजन से स्वच्छता संवाद कर स्वच्छता की शपथ दिलाई जा रही है। नोडल अधिकारी आईईसी मुकेश बंसल ने बताया कि शनिवार को वार्ड 58 बसंत विहार में रहवासियों संग के स्वच्छता संवाद कर स्वच्छता की शपथ ली गई। इसके साथ ही क्षेत्रीय

कार्यालय क्रमांक 8 अन्तर्गत वार्ड 19 कुंज विहार कॉलोनी में रहवासी संघ को क्षेत्राधिकारी राजेश भदोरिया द्वारा स्वच्छता की शपथ दिलवाई गई एवं स्वच्छता के सम्बन्ध में संवाद कर आमजन को स्वच्छता के महत्व बताए गए तथा सभी को घरों में दो-दो डस्टबिन रखने के साथ ही कचरा सिर्फकचरा वाहन में देने के लिए कहा गया।

पाल युवा मंच का प्रतिभा सम्मान समारोह आज

ग्वालियर। पाल युव मंच द्वारा आयोजित डा. राजेन्द्र सिंह पाल स्मृति संभागीय प्रतिभा सम्मान समारोह आज 1 दिसम्बर रविवार को दोपहर 12 बजे से चेम्बर आफकामर्स के माधवराव सिंधिंया सभागार में आयोजित किया गया है। कार्यक्रम में महापौर श्रीमती शोभा सिकरवार, स्वामी विजय सनातनी हरिद्वार एवं विधायक सतीश सिकरवार उपस्थित रहेंगे। कार्यक्रम संयोजक पवन सिंह पाल, पाल युवा मंच के प्रवीण पाल, अशोक पाल, वीरेन्द्र पाल, भगवानदास पाल, अम्बिकेश धनगर, संजय पाल, गिरीश पाल, हितेश पटेल, कैलाश पाल, राजेश पाल, राजू सागर, देवेन्द्र देवू सागर, मोतीराम पाल, सीताराम पाल, मुकेश पाल आदि ने समाज के सभी लोगों से कार्यक्रम में सम्मलित होकर सफ्ल बनाने की अपील की है।

बजरंग भक्त मंडल का वार्षिक महोत्सव आज

ग्वालियर। बजरंग भक्त मंडल का वार्षिक आयोजन आज 1 दिसंबर को शाम 5 बजे से अग्रवाल धर्मशाला ढोली बुआ का पुल बजरिया पर आयोजित किया जाएगा। मंडल के अध्यक्ष आशीष मंगल ने बताया कि वार्षिक महोत्सव में ग्वालियर के कलाकार रितिक मांझी एवं चित्रांश शर्मा द्वारा भजनों की प्रस्तुति श्याम म्यूजिकल ग्रुप के साथ दी जाएगी। कार्यक्रम में छप्पन भोग, फूलबंगला, भोजन प्रसादी एवं गौसेवकों का सम्मान किया जाएगा। कार्यक्रम में आदर्श गौशाला के संत ऋषभदेवानंद महाराज उपस्थित रहेंगे। इसी क्रम में शनिवार को जनकताल स्थित गौशाला में 600 किलो हरे चारे

(लूसन) की सेवा की गई। सेवा में अध्यक्ष आशीष मंगल, सचिव राकेश मंगल, सह सचिव नमन अवस्थी, कोषाध्यक्ष राम किशोर मंगल, उपाध्यक्ष अमन गर्ग, संजीव गुप्ता, हरीश राठौर, हरीश चंद्र अग्रवाल आदि सदस्य उपस्थित थे।

महापौर ने श्री पशुपतिनाथ मेले का किया भूमिपूजन, 10 दिसंबर से लगेगा मेला

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। शनिवार की सुबह प्रतिवर्ष लगने वाले श्री पशुपतिनाथ मेले का भूमि पूजन नगर निगम की महापौर शारदा-राजेंद्र प्रसाद सोलंकी द्वारा संजय पार्क स्थित भगवान श्री पशुपतिनाथ जी के मंदिर में पूजा अर्चना कर मेले का विधिवत भूमिपूजन महापौर द्वारा किया गया। इस अवसर पर महापौर ने कहा कि श्री पशुपतिनाथ मेला मुरैना की पहचान है। इस बार आयोजित होने वाले मेले में सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं कवि सम्मेलन का आयोजन भी किया जाएगा। मेले को भव्य रूप से आयोजित करने का प्रयास भी किया जाएगा। कार्यक्रम की शुरुआत में सुंदरकांड कांड पाठ का आयोजित किया गया। सुंदरकांड पाठ नगर निगम की एमआईसी सदस्य श्रीमती भावना मंडलेश्वर हर्षाना ने पूजा अर्चना कर सुंदरकांड पाठ का प्रारंभ

कराया। नगर निगम आयुक्त सत्येंद्र धाकरे भी भूमिपूजन कार्यक्रम में मौजूद रहे। श्री धाकरे ने बताया कि इस बार श्री पशुपतिनाथ मेला भव्य रूप से आयोजित किया जाएगा। मेले में दुकान आवंटन एवं अन्य व्यवस्थाएं भी युद्ध स्तर से की जा रही हैं, जिससे कि मेले को भव्य रूप दिया जा सके। मेले के भूमिपूजन के अवसर पर नगर निगम के सभापति राधारमन दंडोतिया भी मौजूद रहे। श्री दंडोतिया ने बताया कि श्री पशुपतिनाथ मेला मुरैना की शान है। यह एक पारंपरिक मेला है, जो प्रतिवर्ष श्री पशुपतिनाथ भगवान के नाम से संचालित होता है। मेले के भूमिपूजन कार्यक्रम में एमआईसी सदस्य राकेश यादव, लोकेंद्र-खुशबू दंडोतिया, प्रमोद बंटी यादव, प्रदीप जगनेरिया, भावना-मंडलेश्वर हर्षाना, डॉ. योगेंद्र मावई, उप नेता प्रतिपक्ष सोनू जोनवार सहित नगर निगम के वार्ड पार्षद शहर के गणमान्य नागरिक सहित नगर निगम के कर्मचारी, अधिकारी भी मेला भूमिपूजन कार्यक्रम में मौजूद रहे। कार्यक्रम का संचालन जनसंपर्क अधिकारी रहीम चौहान द्वारा किया गया।

एचएल ग्रुप आज आयोजित करेगा कार्यक्रम

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/जौरा। एचएल ग्रुप ऑफ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट जौरा अपनी स्थापना के 21 वर्ष सफलता और विश्वास के साथ पूर्ण कर चुका है। एचएल ग्रुप ऑफ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट आज जिस मुकाम पर है वह सब आपके सहयोग और विश्वास का परिणाम है। लोगों का ऐसा मानना है खुशियां बांटने से कई गुनी बढ़ जाती हैं। इसी सूत्र को ध्यान में रखते हुए आज रविवार 01 दिसंबर सायंकाल 4:00 बजे से स्थानीय हरे कृष्णा होटल एमएस रोड जौरा में एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया है, जिसमें विद्यालय के संस्थापक, संरक्षक, अध्यक्ष उपाध्यक्ष, सदस्य सभी को आमंत्रित किया गया है।

जिपं सीईओ ने शासकीय उमा विद्यालय रिठोराकलां का किया औचक निरीक्षण

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। मुख्य कार्यपालन अधिकारी जिला पंचायत डॉ. इच्छित गढ़पाले ने शनिवार को शासकीय एकीकृत उच्चतर माध्यमिक विद्यालय रिठौरा कला का 3.30 बजे औचक निरीक्षण किया।

विद्यालय 3.30 बजे मिला बंद, प्राचार्य व प्रभारी प्रचार्य को तत्काल निलंबित करने के निर्देश

26 शिक्षकों का 3-3 दिन का वेतन काटने के निर्देश

निरीक्षण के दौरान विद्यालय समय से पहले बंद होना पाया गया। रिकॉर्ड परीक्षण में पाया कि विद्यालय में 28 शिक्षक दर्ज है। जिला सीईओ ने तत्काल 28 शिक्षकों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की है।जिसमें प्राचार्य डॉ. एस.एस. तिवारी और प्रभारी प्राचार्य आनंद शर्मा को तत्काल प्रभाव से निलंबित करने के निर्देश दिए हैं। वहीं 26 शिक्षकों का तीन-तीन दिन का वेतन काटने के निर्देश दिए हैं। जिसमें उच्चस्तर माध्यमिक शिक्षक वर्षा चौधरी, धर्मवीर वर्मा, मनोज, धीरेंद्र सिंह कुशवाह, संजय कुमार गोयल, निहारिका शर्मा, तारकेश्वरी, प्रयोगशाला शिक्षक निलय तोमर, महेश कुमार गोयल, श्री राजपूत, माध्यमिक शिक्षक शैलेंद्र शर्मा, योगेंद्र शर्मा, शिवराज जयंत, चंद्रप्रकाश, राम किशोर शर्मा, माध्यमिक शिक्षक उमा राठौड़, सोनू आर्य, राजकुमार बिचौलिया, ममता तिवारी, उच्च श्रेणी शिक्षक अशोक शर्मा, रामसेवक शर्मा, भृत्य राजेंद्र, उच्चतर माध्यमिक शिक्षक प्रदीप सिंह राजपूत, एलडीसी राजीव सिंह राजोरिया, संतान पालन अवकाश गिरिजा शाक्य, उच्चतर माध्यमिक शिक्षक ममता नरवरिया का 3-3 दिवस का वेतन काटने के निर्देश दिए हैं।

नगर पालिका अध्यक्ष द्वारा किया गया विद्यालय के संचालक का सम्मान

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/जौरा। नगर पालिका क्षेत्र में संचालित सोल्जर अकादमी हायर सेकंडरी विद्यालय से पूर्व में अध्ययनरत् रहे चार छात्रों ने मेडिकल परीक्षा (NEET) पास करके मेडिकल कॉलेज में प्रवेश लिया है और गत सत्र भी हाई स्कूल बोर्ड परीक्षा में जिले में प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा वर्तमान सत्र 2023- 24 में जिला में द्वितीय और 12वीं छात्रा का माध्यमिक शिक्षा मंडल मध्य प्रदेश भोपाल की ओर से उच्च शिक्षा के लिए मिलने वाली SHEC स्कीम के लिए चयन हुआ है। इन उपलब्धियों की जानकारी जब नगर पालिका अध्यक्ष अखिल माहेश्वरी को मिली तो वे विद्यालय के संचालक दिनेश सिंह जादौन का सम्मान करने विद्यालय पहुंचे और विद्यालय के संचालक दिनेश सिंह जादौन व संचालिका नीलम जादौन का सम्मान

किया और विद्यालय के समस्त स्टाफ को धन्यवाद दिया।
इस अवसर पर विद्यालय परिवार द्वारा अध्यक्ष और साथ में आए अन्य पार्षदगणों का शॉल, श्रीफल, स्मृति चिन्ह भेंटकर व माल्यार्पण कर स्वागत किया। श्री माहेश्वरी ने अपने उद्बोधन में कहा कि जिस संस्था ने हमारे देश को चार नवीन डॉक्टर दिए यह जौरा नगर के लिए ही नहीं पूरी तहसील के लिए गौरव की बात है। इस अवसर पर विद्यालय परिवार को बधाई एवं सभी छात्रों को शुभकामनाएं दीं। इस अवसर पर कदम सिंह कुशवाह पार्षद, शिवदयाल गौड़, राजपाल रावत समाजसेवी, दिनेश सिंह सिकरवार पूर्व जनपद सदस्य, अनुज सिकरवार भाजपा युवा मोर्चा, दिलीप सिंह चौहान, दिनेश रजक विशेष रूप से उपस्थित रहे। कार्यक्रम का संचालन सुमित पाराशर ने किया।

नागाजी मंदिर परिसर में आज से प्रारंभ होगी श्रीमद् भागवत कथा

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/पोरसा। प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी श्री नागजी पूर्णिमा महोत्सव महोत्सव के उपलक्ष्य में श्रीमद् भागवत कथा का आयोजन श्री नागाजी मंदिर परिसर में 01 दिसंबर से किया जाएगा, जो महामंडलेश्वर महंत रामलखन दास महाराज के सानिध्य में होगा। कथा का वाचन श्री धाम वृंदावन के ऋषिकेश शास्त्री अपनी मधुर वाणी से संगीतमय कथा का रसपान भक्तों को करायेंगे। उक्त कथा की व्यवस्थाएं संत रामरतन दास बाबा गढ़वाले, प्रभारी महंत शिवचरण दास महाराज, पुजारी संजू दास शुक्ला, सुरेश शुक्ला, आलोक गुप्ता, मुकेश गोयल, रामशंकर पाठक बाबा, राधाकृष्ण गुप्ता सहित श्री नागाजी भक्त मंडल की सभी पदाधिकारी गण

एमएस रोड एवं मई वाले कुआं तक सिमटा अस्थाई अतिक्रमण हटाओ अभियान

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/जौरा। नगर पालिका की जिम्मेदार कर्ताधर्ताओं द्वारा चलाया गया अस्थाई अतिक्रमण हटाओ अभियान फिलहाल तो ऐसा ही लगता है कि एमएस रोड एवं मई वाले कुआं दांतरे टॉवर तक ही सिमट कर रह गया है, जिससे आमजनों में पक्षपात एवं भेदभाव की भी जनचर्चा सुनने को मिल रही है। नगर पालिका द्वारा अध्यक्ष अखिल माहेश्वरी के निर्देशन में नगर को साफ-स्वच्छ बनाने एमएस रोड नगर के व्यस्त बाजारों में पल-पल पर लगने वाले जाम से निजात दिलाने के लिए नाले-नालियों के आगे रखे गए सामान को हटाने के लिए अस्थाई अतिक्रमण हटाओ अभियान चलाया गया था। यह अभियान सफलतापूर्वक एमएस रोड पर मनीष पेट्रोल पंप से

प्रारंभ होकर रेलवे क्रॉसिंग तक चला। उसके बाद यह अभियान पुराने बस स्टैंड के पास स्थित हनुमान मंदिर से मइ वाले कुआं तक चलाया गया। अभियान के दौरान जहां कई स्थानों पर नगर पालिका की जेसीबी चली तो कई दुकानदारों नागरिकों ने अपनी स्वेच्छा से ही नाले-नाली के आगे रखे गए स्थाई अतिक्रमण को हटा लिया था, लेकिन अब पिछले 7 दिनों से नगर पालिका का अस्थाई अतिक्रमण हटाओ अभियान बंद पड़ा है, जिससे एमएस रोड एवं मइ वाले कुआं के पास रहने वाले दुकानदारों आमजनों का कहना है कि अब नगर पालिका के जिम्मेदार कर्ताधर्ता अब बाजारों में नाले -नालियों के आगे से स्थाई अतिक्रमण को क्यों नहीं हटा रहे हैं? यह तो सीधा-सीधा भेदभाव पक्षपात नजर आ रहा है।

इनका कहना है :-

अस्थाई हटाओ अभियान को लेकर मुख्य नगर पालिका अधिकारी वीरेंद्र सिंह रावत का कहना है कि अभी कर्मचारी फल, चाट के ठेले हॉकर्स जोन में पहुंचाने में लगे हुए हैं। सोमवार या मंगलवार से बाजारों में भी नाले-नालियों के आगे ऊपर नीचे किए गए अस्थाई अतिक्रमण को हटाने का अभियान चलाएंगे।

सरस्वती शिशु मंदिर में सम्पन्न हुआ दादा-दादी, नाना-नानी सम्मेलन

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। सरस्वती शिशु मंदिर पुरानी हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी में दादा-दादी एवं नाना-नानी सम्मेलन कार्यक्रम का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम जिले में पहला कार्यक्रम था। इस कार्यक्रम में आए हुए दादा-दादी एवं नाना-नानी ने पूरे मनोयोग से सहभागिता की। सबसे पहले कार्यक्रम में सभी के अनुभव साझा किए गए। उसके बाद अतिथि उद्बोधन हुआ। फिर चेयर रेस पासिंग बॉल और भजन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। प्रथम स्थान आए प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया गया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती हेमलता राणाजी विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. मयूरी गुप्ता आए एवं कार्यक्रम की अध्यक्षता ओपी गुप्ता ने की। अतिथि परिचय विद्यालय की प्रधानाचार्य श्रीमती मीरा गोलश ने करवाया। अतिथि आभार के बाद सभी ने सामूहिक अल्पाहार किया। सभी को कार्यक्रम बहुत ही पंसद आया।

शिक्षा में परिवार की भागीदारी हो तो छात्र आगे बढ़ते हैं: कौरव

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। सरस्वती शिशु मंदिर विद्यालय के भैया-बहिन शैक्षणिक एवं सामाजिक दृष्टि से कैसा प्रदर्शन कर रहे हैं, यह विचारणीय है। वर्षभर शिक्षण के दौरान अभिभावक की सक्रिय सहभागिता छात्रों की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण है। जब विद्यालय और अभिभावकों के मध्य समन्वय उत्कृष्ट हो, तो उनके वांछित परिणाम देखने को मिलते हैं। सामाजिक कौशल को विकसित करने की अधिक संभावना होती है। सहभागिता में समय की बाधा को कम करते हुए अभिभावक-शिक्षक सम्मेलन में सहभागी होना अपने बालकों को संस्कारमय शिक्षा दिलाने के लिये प्रतिबद्ध होना है। आरआरएस के शताब्दी वर्ष में पंच परिवर्तन में कुटुंब प्रबोधन की महत्ता को भी शामिल किया गया है। उक्त उद्गार सरस्वती शिशु मंदिर शिक्षा नगर मुरैना में आयोजित अभिभावक सम्मेलन में विद्याभारती के पूर्व विभाग समन्वयक ज्ञान सिंह कौरव ने व्यक्त किये। पूर्व सांसद अशोक अर्गल ने कहा कि विद्यालय, पालक और शिक्षक मिलकर छात्र का सर्वांगीण विकास कर सकते हैं, लेकिन इसमें आपकी भागीदारी 100 प्रतिशत हो। मैं भी सरस्वती शिशु मंदिर शिक्षा नगर मुरैना का पूर्व छात्र हूं और मैंने ने भी यहां विद्या के साथ-साथ संस्कार और अनुशासन सीखा है। पूर्व सांसद अशोक अर्गल, शारदा शिक्षा समिति अध्यक्ष गोपाल सिंह परमार, समिति के सचिव विवेक वर्मा और विद्यालय के प्राचार्य एवं प्रबंधक सुनील दीक्षित मंचासीन रहे। इस अवसर पर रंगारंग कार्यक्रम, सभी कक्षाओं की हस्तलिखित पत्रिका, स्वदेशी वस्तुओं और लर्निंग मेटेरियल प्रदर्शनी का अतिथियों एवं अभिभावकों द्वारा विमोचन, अवलोकन किया गया। कार्यक्रम का समापन शांति मंत्र के साथ हुआ।

भाजपा नेता बालकृष्ण शर्मा विधायक प्रतिनिधि मनोनीत

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। भाजपा के वरिष्ठ नेता बालकृष्ण शर्मा (सांटा) को सुमावली विधायक व मंत्री ऐदल सिंह कंषाना द्वारा विधायक प्रतिनिधि नियुक्त किया गया है। अपने मनोनयन पर श्री सांटा ने मंत्री ऐदल सिंह सहित संगठन के वरिष्ठ नेतृत्व का आभार व्यक्त किया है, वहीं उनके मनोनयन पर अनेक लोगों ने पुष्पहार से स्वागत किया स्वागत करने वालों में पर आज पुष्पहारो से स्वागत किया गया। स्वागत करने वालों में वरिष्ठ नेता सरदार सिंह गुर्जर, ब्रजकिशोर डंडोतिया, रामेश्वर सिंह गुर्जर, संजय शर्मा, विपिन डंडोतिया, सोनू शर्मा, प्रताप गुर्जर, मनोज शर्मा, बल्ली डंडोतिया, विनोद डंडोतिया, पप्पू बैसला, अजय कटारे, मुकेश खेमरिया, दाताराम शर्मा (मंजू), प्रेमकिशोर शर्मा, श्रीचंद यादव आदि शामिल हैं।

पीएम श्री केन्द्रीय विद्यालय मुरैना के विद्यार्थियों ने किया शैक्षणिक भ्रमण

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। पीएमश्री केन्द्रीय विद्यालय मुरैना के विद्यार्थियों ने शुक्रवार को एमआईटीएस कॉलेज, अटल बिहारी वाजपेयी भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान एवं सूर्य मंदिर ग्वालियर का शैक्षणिक भ्रमण किया। इस भ्रमण का उद्देश्य विद्यार्थियों को तकनीकी ज्ञान, शोध और नवीनतम प्रौद्योगिकी क्षेत्रों की जानकारी प्रदान करना था। भ्रमण के दौरान विद्यार्थियों को एमआईटीएस कॉलेज, अटल बिहारी वाजपेयी भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान के विभिन्न विभागों, प्रयोगशालाओं और अनुसंधान केंद्रों का अवलोकन कराया गया। विद्यार्थियों ने आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डाटा

साइंस, और साइबर सिक्योरिटी जैसे उन्नत विषयों पर विशेषज्ञों के साथ संवाद किया। कॉलेज के प्राध्यापकों ने विद्यार्थियों को शिक्षा और तकनीकी विकास के विभिन्न आयामों पर जानकारी दी। इस दौरान विद्यार्थियों को नवीनतम प्रोजेक्ट्स और इनोवेशन देखने का मौका भी मिला। भ्रमण का दूसरा चरण सूर्य मंदिर में आयोजित किया गया। सूर्य मंदिर की वास्तुकला और सांस्कृतिक महत्व ने विद्यार्थियों को आकर्षित किया। शिक्षकों ने उन्हें मंदिर के इतिहास, स्थापत्य शैली और इससे जुड़े मिथकों की जानकारी दी। विद्यालय के प्राचार्य सतीश कुमार ने बताया कि इस प्रकार के शैक्षणिक भ्रमण से विद्यार्थियों को न केवल अपने पाठ्यक्रम के विषयों की गहराई को समझने में मदद मिलती है, बल्कि उनके भविष्य के लिए भी प्रेरणा मिलती है।
इस अवसर पर शिक्षकों और विद्यार्थियों ने अपने अनुभव साझा करते हुए इसे ज्ञानवर्धक और प्रेरणादायक बताया और अंत में विद्यार्थियों ने इस अनुभव के लिए संस्थान और शिक्षकों का धन्यवाद किया।

विकलांग बल ने मनाया स्व. बच्चू सिंह का 102वां जन्मदिन

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना। विकलांगों के मसीहा के रूप में पहचाने जाने वाले स्व. बच्चू सिंह का 102 वां जन्मदिन विकलांग बल के तत्वावधान में शनिवार को मनाया गया। जिला मुख्यालय पर हुए कार्यक्रम में विकलांग बल के उप प्रधान हेमंत कुशवाह ने स्व. बच्चू सिंह के चित्र पर माल्यार्पण कर उन्हें नमन किया। इस मौके पर श्री कुशवाह ने कहा कि विकलांग साथियों को उनका हक और अधिकार दिलाने के लिए हम सबको एकजुट होकर संघर्ष करना होगा। उन्होंने 30 नवंबर से आगामी 2 माह तक संगठन का सदस्यता अभियान चलाने की घोषणा भी की। इस कार्यक्रम में जिलाध्यक्ष विक्रम सिंह एडवोकेट, पूर्व जिला उपाध्यक्ष श्रीमती हरदीप कौर, पूर्व शहर अध्यक्ष वीरेन्द्र कुशावाह, मुकेश कुशवाह आदि उपस्थित थे।

पीठाधीश्वर अजय योगी के पिता सुरेशचंद्र का निधन

मुरैना। इंद्रप्रस्थ पीठाधीश्वर स्वामी अजय योगी के पिताजी वरिष्ठ समाजसेवी और कांग्रेस नेता रहे सुरेशचंद्र डण्डौतिया का 30 नवंबर की सुबह हृदयाघात के चलते आकस्मिक निधन हो गया। उनका अंतिम संस्कार पैतृक गांव हिंगौनाखुर्द में आज 1 दिसंबर की सुबह 10 बजे होगा। मुखाग्नि पीठाधीश्वर स्वामी अजय योगी द्वारा दी जाएगी। स्वामी अजय योगी के पिताजी के निधन पर जिलेभर के कांग्रेस नेताओं ने शोक जताया है।

स्काउट गाइड ने निकाली जागरुकता रैली

''पहले पाओ शिक्षा, दूर भगाओ बाल भिक्षा''

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज5
मुरैना। भारत स्काउट गाइड मध्यप्रदेश चंबल संभाग मुरैना द्वारा 28 नवंबर से 02 दिसंबर, 2024 तक संभागीय स्काउट प्रशिक्षण केंद्र जीगनी मुरैना में आयोजित संभाग स्तरीय रैली में शनिवार को भारत स्काउट गाइड के भिंड, मुरैना, श्योपुर से भाग लेने वाले 450 स्काउट गाइड, 50 रोवर रेंजर एवं 40 स्काउट शिक्षक, गाइड शिक्षिका एवं 50 का रैली स्टाफ द्वारा मुरैना नगर में अग्रसेन पार्क जीवाजी गंज मुरैना से रैली निकाली गई। जो जीवाजी गंज से महामाया मंदिर, रुई की मंडी, स्टेशन रोड, हनुमान चौराहा, पुल तिराहा, पुरानी कलेक्ट्रेट से होते हुए शहीद रामप्रसाद बिस्मिल संग्रहालय पर संपन्न हुई।

जिसमें रैली में भाग लेने वाले स्काउट, गाइड द्वारा ''स्काउट गाइड बोलियां'' बोले मीठी बोलियां । पाउच, पन्नी, पॉलिथीन, पर्यावरण के दुश्मन तीन, भारत माता की जय।स्वच्छता को अपनाना है। भारत को आगे बढ़ाना है, के नारों के साथ जा रहे थे। इस रैली की थीम है ''पहले पाओ शिक्षा, दूर भगाओ बाल भिक्षा।'' इसके बाद संभागीय स्काउट प्रशिक्षण केंद्र जींगनी मुरैना में प्रशिक्षण केंद्र पर पहुंचकर झांकी प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। जिसमें भिंड, मुरैना, श्योपुर जिले की टीमों ने भाग लिया। संभागीय रैली के अंतर्गत मुरैना नगर का भ्रमण कार्यक्रम को सफल बनाने में सुखदेव सिंह चौहान रैली संचालक एवं सहायक राज्य संगठन आयुक्त स्काउट चंबल संभाग मुरैना, ओपी शर्मा, वीर सिंह यादव सहायक रैली संचालक, ओपी सिकरवार सहायक रैली संचालक, अतिवल सिंह, शेखर सिंह यादव जिला सचिव, सीताराम गुर्जर, मुरारी लाल मावई, अतर सिंह राजपूत, डॉ. राकेश शर्मा, रामनरेश दंडोतिया, रोशन लाल गर्ग, प्रदीप सिंह चौहान, शैलेंद्र कुमार ओझा, विपिन कुमार, कुमारी रीना प्रजापति, केदार सिंह यादव आदि की उपस्थिति में रैली निकाली गई। बरेली प्रतिभागियों द्वारा अमर शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल संग्रहालय मुरैना का अवलोकन किया एवं गदगद हो गए।

ऐतिहासिक क्षेत्र की जानकारी देने के लिए बच्चों की बस हुई रवाना

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/पोरसा। बच्चों को स्कूली किताबी ज्ञान के अलावा ऐतिहासिक क्षेत्र की जानकारी प्राप्त हो तथा सनातन धर्म की जानकारी हो इसके लिए पं. पुत्तूराम मेमोरियल स्कूल के छात्रों का एक दल दो बस के द्वारा भगवान रामलला के दर्शन के लिए ओरछा, पीतांबरा झांसी का किला, चौरासी वाले हनुमान जी आदि जगह का भ्रमण के लिए सुबह हरी झंडी प्रदीप उपाध्याय व संदीप उपाध्याय के द्वारा दिखाकर रवाना की गई। उक्त दोनों बसों में लगभग एक सैकड़ा छात्रों को स्कूल के शिक्षकों के द्वारा संपूर्ण क्षेत्र की जानकारी उपलब्ध कराई जाएगी।

रोजगार मेले में 82 युवाओं का हुआ चयन

मुरैना। मुख्य कार्यपालन अधिकारी जिला पंचायत डॉ. इच्छित गढ़पाले के निर्देशानुसार जिला परियोजना प्रबंधक दिनेश तोमर के मार्गदर्शन में मुख्य कार्यपालन अधिकारी जनपद पंचायत मुरैना महावीर जाटव की उपस्थिति में जनपद कार्यालय में रोजगार मेले का आयोजन किया गया। जिसमें डीडीयूकेजीवाय ग्वालियर के द्वारा 34 युवाओं का चयन एवं आइसर कंपनी द्वारा 11, एसआईएस सिक्योरिटी द्वारा 8, न्यूमेक्स द्वारा 4 युवाओं का चयन किया गया। कंपनी के भर्ती अधिकारी के द्वारा अपनी कंपनी, प्रशिक्षण एवं जॉब से संबंधित समस्त प्रकार की जानकारी बेरोजगार युवक- युवतियों को प्रदाय कर चयन प्रक्रिया की गई। जिसमें 122 युवक-युवतियों के पंजीयन किए गए। रोजगार मेले में कुल 82 युवाओं का चयन किया गया। ब्लॉक से सहायक ब्लॉक प्रबंधक राकेश कुमार, कंप्यूटर ऑपरेटर श्रीमति रविता तोमर, सीएलएफ मैनेजर श्रीमती लक्ष्मी शर्मा एवं करन सिंह उपस्थित थे।

कर्मचारी के सेवानिवृत होने पर हुआ रामायण पाठ

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-
मुरैना/पोरसा। मध्य प्रदेश विद्युत वितरण कंपनी लिमिटेड में कार्यरत् लाइनमैन ग्याप्रसाद त्यागी के रिटायरमेंट पर बिजली घर स्थित दुर्गा मंदिर पर अखंड रामायण पाठ का आयोजन किया गया, जिसमें पाठ पूर्ण होने पर हवन आहुतियां पं. ब्रजकिशोर उपाध्याय के द्वारा वेद मंत्र पढ़े गए तथा आहुतियां ग्याप्रसाद त्यागी, संतोष शर्मा, अनिल शर्मा मन्टे पंडित जी, मुंदरे गुप्ता, शिवसिंह चौबे, सुनील गुप्ता, सोनू सिंह तोमर, रामप्रताप सिंह तोमर, सुनील मांझी, कृष्ण मुरारी, विद्युत मंडल के सभी कर्मचारियों ने सहभागिता की। अंत में हवन के बाद भंडारा प्रसादी सभी को गृहण कराई गई, जिसमें सैकड़ों लोगों ने भंडारा प्रसादी गृहण की।

केन्द्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया की मदद से सपने पूरे कर रही है अशोकनगर की मुस्कान रघुवंशी

कोज़िअस्को के बाद अफ्रीका महाद्वीप की किलिमंजारो चोटी पर फहराया तिरंगा

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

अशोकनगर। खेलों के साथ- साथ युवा प्रतिभाओं के प्रोत्साहन और विकास के लिए हमेशा बढ़-चढ़कर कार्य करने वाले केन्द्रीय मंत्री और गुना सांसद ज्योतिरादित्य सिंधिया की मदद से एक और प्रतिभा इन दिनों देश और दुनिया में मध्यप्रदेश का नाम रोशन कर रही है। अशोकनगर की बेटी मुस्कान रघुवंशी ने इस बार अफ्रीका महाद्वीप की सबसे ऊंची चोटी किलिमंजारो पर तिरंगा लहराकर पूरी दुनिया में देश और प्रदेश का मान बढ़ाया है। मुस्कान इस दोहरी सफलता का रिकॉर्ड अपने नाम करने वाली मध्यप्रदेश की सबसे कम उम्र की पर्वतारोही बना चुकी हैं। इस अभियान को सफल बनाने में 'मिशन पॉसिबल' संस्था के नेतृत्वकर्ता नरेन्द्र यादव ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जिनके मार्गदर्शन की बदौलत मुस्कान ने इतनी बड़ी

कामयाबी हासिल की है।

गौरतलब है कि मुस्कान रघुवंशी ने इससे पहले जुलाई महीने में ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप की सबसे ऊंची चोटी कोज़िअस्को पर चढ़ाई करने के लिए केन्द्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया से आर्थिक मदद की गुहार लगाई थी। जिस पर तुरंत संज्ञान लेते हुए केन्द्रीय मंत्री ने आर्थिक सहायता मुहैया कराई थी। जिसके बाद 15 अगस्त 2024 को मुस्कान रघुवंशी ने ऑस्ट्रेलिया की सबसे ऊंची और सर्द चोटी पर भारत का झंडा लहराते हुए अपना लक्ष्य प्राप्त किया था। इस दौरान मुस्कान ने सिंधिया की तस्वीर व नाम का लिखा प्ले कार्ड भी प्रदर्शित किया था। इस मौके पर मीडिया से बातचीत करते हुए मुस्कान ने बताया कि उनका अगला अभियान यूरोप महाद्वीप की सबसे ऊंची चोटी एल्ब्रस को फतह करना है, जिसके लिए उनके है संभव प्रयास के लिए केन्द्रीय मंत्री सिंधिया उनकी सहायता कर रहे हैं। इस सहयोग के लिए उन्होंने सिंधिया के प्रति आभार भी जताया।

ट्वीट कर सिंधिया ने दी बधाई

सिंधिया ने अपने एक्स हैंडल से ट्वीट कर मुस्कान को बधाई दी और कहा कि मुस्कान ने पूरे प्रदेश और देश को गौरवान्वित किया है।

राष्ट्रीय महासमूह गान में ऊर्जा मंत्री तोमर ने बच्चों को 5-5 हजार की राशि देने की घोषणा की

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

ग्वालियर। भारत विकास परिषद् मध्य भारत उत्तर प्रांत की शाखा वीरांगना, ग्वालियर द्वारा मिस हिल हायर सैकन्डरी स्कूल में मिस हिल स्कूल व बेल एयर पब्लिक स्कूल के विद्यार्थियों की भागीदारी के साथ 1214 विद्यार्थियों द्वारा महासमूह गान का आयोजन किया गया। प्रांतीय संयोजक अशोक गर्ग प्रचार-प्रसार ने बताया कि इन बच्चों द्वारा भारत विकास परिषद् की चेतना के स्वर पुस्तक का गीत गाया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि ऊर्जा मंत्री प्रद्युम्न सिंह तोमर उपस्थित थे। कार्यक्रम में ऊर्जा मंत्री ने अच्छे कार्य के लिए 18 बच्चों को 5000- 5000 रुपये की धनराशि देने की घोषणा की, साथ ही कहा कि भारत विकास परिषद् हमेशा संस्कार देने का कार्य करती है। कार्यक्रम की अध्यक्षता क्षेत्रीय महासचिव सुधीर अग्रवाल द्वारा की गई। विशिष्ट अतिथि के रूप नेशनल प्रोजेक्ट मेंबर डॉ. संदीपा मल्होत्रा, क्षेत्रीय संयुक्त सचिव अनूप अग्रवाल, प्रांतीय अध्यक्ष अमित जैन , वार्ड 32 के पार्षद सोनू त्रिपाठी, क्षेत्रीय महिला सहभागिता प्रमुख अलका कुशवाह, निधि गर्ग, पारुल भारद्वाज, शाखा अध्यक्ष सुनीता सिंह, मिस हिल हायर सेकेंडरी स्कूल के प्राचार्य एसपी सिंह, विजयेन्द्र सिंह कुशवाह एवं ऋषभ सिंह सिसोदिया प्रांतीय संयोजक अशोक गर्ग, अशोक शर्मा, राजकुमार गर्ग, अभय गर्ग, अनामिका अग्रवाल, शाखा संरक्षिका श्रीमती रचना सोलंकी, बाला भदौरिया, आस्था मराठा, शैली भदौरिया, शशि सेंगर, किरण वोहरा, मंजुला समाधिया, मनु गुप्ता, मनीषा श्रीवास्तव, मोनिका चोपड़ा, डॉली, सुनीता जी, करुणा गुप्ता उपस्थित रहीं। कार्यक्रम का सफल संचालन श्रीमती स्वाति बिरथरे द्वारा किया गया। अंत में शाखा सचिव शैलजा सिंह सिसोदिया द्वारा आभार व्यक्त किया गया। अंत में राष्ट्रगान के साथ कार्यक्रम का समापन किया गया।

दो गांजा तस्करों को 10-10 वर्ष का सश्रम कारावास

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

मुरैना। 30 नवम्बर 2024 को गांजा तस्करी के अपराध में 11 महीनों के अंदर फैसला सुनाते हुए दो लोगों को 10-10 वर्ष के सश्रम कारावास व 1-1 लाख रुपये जुर्माना की सजा दी गई है। शासन की ओर से पैरवी इन्द्र सिंह गुर्जर ने की है।

घटना इस प्रकार है कि दिनांक 27.01.2024 को थाना बानमोर के उप निरीक्षक दुर्गेश सिंह भदौरिया को मुखबिर से सूचना मिली कि एक होंडा सिटी सिल्वर कलर की कार क्रमांक डीएल 4 सीएनसी 4100 में दो लड़के अवैध गांजा तस्करी में लेकर ग्वालियर तरफ से आ रहे हैं और आगरा तरफ जाने वाले है। मुखबिर की उक्त सूचना पर से दरोगा जी ने फोर्स इकट्ठा करके तौल कांटा विवेचना किट लेकर रवाना होकर थाने के सामने चैकिंग करते हुए उक्त होंडा सिटी कार को पकड़कर तलाशी ली तो उसमें दो व्यक्ति बैठे हुए थे। उनके नाम पते पूछे तो एक ने अपना नाम गब्बर सिंह पुत्र नरवीर सिंह निवास गाँव कल सारा थाना हथीन जिला पलवल हरियाणा तथा दूसरे ने अपना नाम देवेंद्र तेलागांजी पुत्र जग बंधू तेलागांजी निवास पंडेल समबेल थाना पोटांगी जिला कोरापुट उड़ीसा का होना बताया। कार की तलाशी ली तो सीएनजी सिलेंडर में काटकर गांजा भरकर लोहे की क्लंप से कसा हुआ मिला, जिसे खोलकर चैक करने पर गांजा मिला। जिसे तोला तो 42 किलो 750 ग्राम गांजा मिला। जिसे मौके पर जप्त कर कार्यवाही कर चालान न्यायालय में पेश किया। अभियोजन की ओर से महत्वपूर्ण साक्ष्य अंकित कराये गये और अंतिम तर्क किये गए। जिसके आधार पर षष्ठम अपर सत्र न्यायालय मुरैना द्वारा आरोपीगण को 10-10 वर्ष के सश्रम कारावास व एक-एक लाख रुपये जुर्माना की सजा दी गई है। शासन की ओर से पैरवी इन्द्र सिंह गुर्जर अपर लोक अभियोजक ने की है।

हाईवे पर ट्रक ड्राईवर को लूटने वाले पाँच बदमाश पुलिस ने दबोचे

घटना में प्रयुक्त दो कारों सहित 315 बोर कट्टा, लूटा गया माल बरामद

-हिन्दुस्तान एक्सप्रेस न्यूज-

मुरैना। रिठौराकलां थाना क्षेत्र में 28 नवंबर की रात को ट्रक ड्राईवर से नकदी सहित बैटरी, डीजल लूटने वाले 5 बदमाशों को बानमोर पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है। पुलिस ने बदमाशों के कब्जे से घटना में प्रयुक्त दो कारों के साथ 315 बोर देशी कट्टा, जिंदा राउण्ड, दो बैटरियों को बरामद किया है।

जानकारी के अनुसार ट्रक ड्राईवर अमरेश सिंह गुर्जर ने रिठौराकलां थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई थी, जिसमें बताया कि 28 नवंबर को हाईवे पर टीकरी गांव के पास दो चार पहिया वाहनों में सवार होकर आए हथियारबंद बदमाशों ने 100 लीटर डीजल, दो बैटरियां और 15 हजार लूट लिए थे। ड्राईवर के अनुसार बदमाशों ने उसे जान से मारने के इरादे से फायरिंग भी की थी। पुलिस ने एफआईआर दर्ज करने के बाद बदमाशों की पतारसी शुरू की। इसी दौरान पुलिस ने लक्ष्मणगढ़ पुल के पास हाईवे से घटना में प्रयुक्त एक कार को बरामद किया। कार में सवार पांच युवकों को पुलिस ने हिरासत में लेकर पूछताछ की। उन्होने लूट, डकैती की योजना को अंजाम दिया जाना कुबूल किया। पूछताछ के बाद पुलिस ने

बदमाशों के कब्जे से घटना में प्रयुक्त 315 बोर कट्टा, एक जिंदा राउण्ड, हुंडई आई-20 कार, लूटी गई दो बैटरियां, डीजल से भरी एक कैन बरामद कर ली है।

सफलता हासिल करने वाली टीम में यह रहे शामिल

निरीक्षक अमित सिंह भदौरिया, सायबर सैल प्रभारी एसआई अभिषेक सिंह, प्र.आर. अरुण सिंह, सुबोध भटेले, राजकुमार, ओमवीर सिंह, रुस्तम सिंह, आरक्षक शेर सिंह, प्रदीप, बानमोर थाने से प्र.आर. दामोदर सिंह, आर. सुनील, प्र.आर. दुष्यंत, संजीव सिंह, आरक्षक मंगल, रामकिशन की कार्यवाही में सराहनीय

पीएचई उपयंत्री बाजपेयी को सेवानिवृत्ति पर विभाग ने दी विदाई

ग्वालियर। लोक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग के वरिष्ठ उपयंत्री एवं जल प्रयोगशाला प्रभारी अनिल बाजपेयी का सेवानिवृत्ति विदाई समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में उपस्थित अधिकारी व कर्मचारियों ने श्री बाजपेयी के कार्यकाल को याद करते हुये भूरि भूरि प्रशंसा की। इस मौके पर सभी ने पुष्पहार पहनाकर शाल व श्रीफल देकर उन्हें सम्मानित किया। इसी अवसर पर वरिष्ठ अधिकारियों ने कहा कि उपयंत्री व प्रयोगशाला प्रभारी श्री बाजपेयी का योगदान पीएचई विभाग कभी भूल नहीं पायेगा। इसके साथ ही आने वाला समय आपका और सुखद हो यही कामना करते

हुये विदाई की शुभकामनायें प्रदान की। जबकि श्री बाजपेयी ने सभी का आभार व्यक्त करते हुये धन्यवाद दिया।

संगठन मंत्री भदौरिया श्रमिक संपर्क अभियान में भाग लेने भोपाल रवाना

ग्वालियर। मप्र राज्य कर्मचारी संघ के प्रदेश संगठन मंत्री सुरेंद्र सिंह भदौरिया श्रमिक संपर्क अभियान शुभारंभ कार्यक्रम में सम्मिलित होने भोपाल रवाना हो गए है। श्री भदौरिया ने बताया कि भारतीय मजदूर संघ द्वारा निर्धारित 15 दिवसीय श्रमिक संपर्क कार्यक्रम प्रदेश महामंत्री कुलदीप गुर्जर के नेतृत्व

में 1 दिसंबर से 15 दिसंबर तक आयोजित किया गया है। इसमें संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों के मजदूरों से संपर्क कर उन्हें सदस्य बनाया जाना है, ताकि उनकी समस्याओं को शासन, प्रशासन से हल करवाया जा सके। कार्यक्रम का विधिवत शुभारंभ भारतीय मजदूर संघ के भोपाल स्थित प्रदेश कार्यालय ठेंगड़ी भवन में आज 1 दिसंबर को होगा।।

घर-घर जाकर बेच रहे थे जहरीली शराब

- दो पकड़े, दो फरार, स्कूटी जब्त

ग्वालियर। घर-घर जाकर जहरीली शराब बेच रहे दो तस्करों को हजीरा थाना पुलिस ने न्यू रेशम मिल से पकड़ा है, जबकि उनके दो साथी फरार हो गए है। पुलिस ने पकड़े गए आरोपियों से एक स्कूटी और अवैध शराब जब्त की है। पुलिस फरार हुए तस्करों की तलाश में दबिश दे रही है।

हजीरा थाना प्रभारी शिव मंगल सिंह सेंगर ने बताया कि कुछ दिनों से सूचना मिली थी कि कुछ तस्कर कांच मिल में अवैध शराब बेच रहे है। इसका पता चलते ही एसआई हरेन्द्र डुक्षसह भदौरिया, एएसआई पूरन सिंह आरक्षक करण, संदीप जाट को आरोपी को पकडने के लिए रवाना किया गया। पुलिस टीम जब कांच मिल पहुंची तो चार युवक भागने लगे, जिसमें दो स्कूटी से थे और दो पैदल भागे। स्कूटी सवारों का पीछा कर पुलिस ने दबोच लिया है और पैदल भागे बदमाश गलियों में फरार हो गए। पुलिस ने संदेही युवकों की तलाशी ली तो उनके पास से स्कूटी में जहरीली शराब बरामद हुई है। शराब बरामद होते ही पुलिस ने पकड़े गए दीपक रैयकबार पुत्र विनोद रैयकबार, अभय आर्य निवासी न्यू रेशम मिल के खिलाफमामला दर्ज कर लिया है।

शिवांग भार्गव पर लगी रासुका, जेल भेजने के आदेश

ग्वालियर। संगीन आपराधिक गतिविधियों में लिप्त शिवांग भार्गव पर रासुका लगाकर निरोधादेश जारी किया गया है। कलेक्टर एवं जिला दण्डाधिकारी श्रीमती रुचिका चौहान ने सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने के उद्देश्य से राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम 1980 की धारा-3 (2) के तहत यह यह निरोधादेश जारी किया है। इस आदेश के माध्यम से जिले के ग्राम डडूमर निवासी, हाल निवास कोटेश्वर कॉलोनी बहोड़ापुर शिवांग भार्गव पुत्र मनीष भार्गव को तीन माह की अवधि के लिये केन्द्रीय जेल रीवा में निरूद्ध करने के निर्देश दिए गए हैं। आदतन अपराधी शिवांग भार्गव के खिलाफसंगीन आपराधिक मामले दर्ज हैं। साथ ही उसने बीते दिनों आनंदनगर-बहोड़ापुर के घनी आबादी क्षेत्र में दहशत फैलाने के लिए हवाई फायर किया था। जिसका वीडियो सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्म पर वायरल हुआ था। जिससे आम जन में भय उत्पन्न हुआ था। इससे कानून व्यवस्था और शहर की लोक शांति व्यवस्था भंग होने की स्थिति बनी थी। इन सब बातों को ध्यान में रखकर जिला दण्डाधिकारी द्वारा पुलिस अधीक्षक के प्रतिवेदन के आधार पर शिवांग भार्गव के खिलाफसख्त कदम उठाया गया है।

चोरी करने आया चोर पकड़ा

ग्वालियर। बुजुर्ग महिला के घर का ताला तोड़कर चोरी करने का प्रयास कर रहा चोर वारदात में सफल होता उससे पहले ही जगार हो गई और चोर भाग निकला। घटना आंतरी थाना क्षेत्र के नाथ कॉलोनी की है। घटना का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद मामला दर्ज कर संदेही चोर को पकड़ लिया है। आंतरी थाना प्रभारी देवेन्द्र मिश्रा ने बताया कि नाथ कॉलोनी निवासी 65 वर्षीय अनारी देवी बीते रोज घर पर अकेली थी और अपने कमरे में सो रही थी। इसी बीच उन्हें आहट हुई और वह अपने कमरे से बाहर आई तो पता चला कि एक चोर उनके बेटे के कमरे का ताला तोडने का प्रयास कर रहा है। चोर पर नजर गई तो पता चला कि चोर उनके गांव में रहने वाला फौजदार सिंह गुर्जर पुत्र सरनाम सिंह गुर्जर है। उसे देखते ही बुजुर्ग महिला ने शोर मचाया तो आरोपी भाग निकला। मामले का पता चलते ही पुलिस मौके पर पहुंची और जांच के बाद चोर की तलाश की, कुछ ही देर बाद पुलिस ने चोर को दबोच लिया है।

नौकरी के लिये दिये रुपए नहीं लौटाए तो ट्रेन से कटकर दी महिला ने जान

ग्वालियर। पति की नौकरी रेलवे में लगवाने के लिए महिला ने चार लाख रुपए एक दलाल को दिए। जब काफी समय बीतने पर नौकरी नहीं लगी तो पीडिता ने रुपए वापस मांगे तो दलाल ने गाली गलौज कर रुपए लौटाने से इनकार कर दिया। इससे दुखी महिला ने ट्रेन से कटकर जान दे दी। घटना आंतरी थाना क्षेत्र के संदलपुर रेलवे ट्रैक पर 28 अक्टूबर की है। पुलिस ने जांच के बाद दलाल पर आत्महत्या के लिए प्रेरित करने का मामला दर्ज कर लिया है। आंतरी थाना क्षेत्र के वार्ड नंबर 13 निवासी रीता पत्नी पंकज रजक ने बीती 28 अक्टूबर को ट्रेन से कटकर जान दी थी। मृतका की पहचान होते ही पुलिस ने जांच की तो पता चला कि कुछ साल पहले रीता और उसके पति से रेलवे में नौकरी लगवाने के लिए चार लाख पच्चीस हजार रुपए प्रवीण शाक्य ने लिए थे। इसके बाद वह जॉब के लिए चक्कर लगाते रहे और वह जल्द ही जॉब दिलाने का आश्वासन देता रहा। काफी समय बीतने पर परिजनों ने रीता पर पैसा लाने का दबाव बनाया तो रीता प्रवीण के पास रुपए लेने के लिए गई थी। जब रीता प्रवीण शाक्य के घर पहुंची तो पहले वह जल्द ही जॉब लगवाने का आश्वासन देता रहा और जब वह पैसे लेने पर अड़ गई तो आरोपी ने उसे गाली गलौज कर बेइज्जत किया था। इसके बाद वह घर पहुंची और काफी दुखी थी। इसके बाद वह घर से निकलकर संदलपुर रेल ट्रैक पर पहुंची और ट्रेन से कटकर जान दे दी। इसका खुलासा होते ही पुलिस ने मामला दर्ज कर आरोपी प्रवीण शाक्य के खिलाफ आत्महत्या के लिए प्रेरित करने का मामला दर्ज कर लिया है। मामला दर्ज होने के बाद जब पुलिस उसके घर पहुंची तो पता चला कि वह अपने घर से फरार है और अब पुलिस उसके संभावित स्थानों पर तलाश कर रही है।

भविष्य के चार्टर्ड एकाउंटेंट्स ने जमकर उठाया यूथ फेस्ट का लुफ्त

ग्वालियर। सीए ग्वालियर ब्रांच की स्टूडेंट्स एसोसिएशन कमेटी द्वारा यूथ फेस्ट 2024 का सफल आयोजन किया। यूथ फेस्ट में मिसेस नेशनल यूनिवर्स 2022 एवं रूबरू सुपर मॉडल वर्ल्डवाइड 2021 शिविका सिंह उपस्थित रहीं। सिकासा चौयरमेन सीए समर्थ दौनेरिया से सभी का अभिवादन किया।

उन्होंने स्टूडेंट्स को पढ़ाई के साथ खुद की ग्रूमिंग पर टिप्स दिए।यूथ फेस्ट कार्यक्रम में सांस्कृतिक गान,नृत्य के साथ नाट्य मंचन अन्य खेल खूद हुए।ब्रांच के उपाध्यक्ष सीए पंकज शर्मा ने सभी को धन्यवाद अर्पित किया। शिविका सिंह ने सीए स्टूडेंट्स को सम्बोधित करते हुए कहा कि इस तरह के कल्चरल कार्यक्रमों में स्टूडेंट्स को बढ़ चढ़कर हिस्सा लेना चाहिए जिससे दिमागी ताजगी के साथ साथ बौद्धिक विकास भी होता है। इस मौके पर ग्वालियर ब्रांच के वाइस चेयरपर्सन सीए पंकज शर्मा,सिकासा चौयरमेन सीए समर्थ दौनेरिया,इमीडिएट पास्ट चौयरमेन सीए सचिन गुप्ता,सीए ऋचा मंडेलिया,सिकासा वाइस चेयरपर्सन विशाल गोयल,ट्रेजरार नमन अग्रवाल,एग्जीक्यूटिव मेंबर आयुष गुप्ता,कोऑर्डिनेटर मुस्कान और मलय उपस्थित रहे कार्यक्रम में 150 से अधिक स्टूडेंट्स ने भाग लिया सभी ने परफॉर्म किया और सभी ने कार्यक्रम का लुफ्त उठाया। सभी स्टूडेंट्स को सर्टिफिकेट और गिफ्ट्स देकर उनका मनोबल बढ़ाया गया।

पनिहार, कल्याणी, सालूपुरा, मुख्तियारपुर व गोसपुरा ग्रामों में लगे राजस्व महाअभियान शिविर

ग्वालियर। राजस्व महाअभियान 3.0 के तहत जिले में रात्रिकालीन शिविर लगाकर ग्रामीणों की राजस्व संबंधी समस्याओं का मौके पर ही निराकरण कराया जा रहा है। इस कड़ी में शनिवार की देर शाम जिले के ग्राम पनिहार, कल्याणी, सालूपुरा, मुख्तियारपुर व गोसपुरा सहित अन्य ग्रामों में राजस्व अधिकारी पहुँचे और रात्रिकालीन शिविर लगाकर समस्याओं का समाधान कराया।

राजस्व अधिकारियों ने रात्रिकालीन शिविरों में राजस्व संबंधी कुछ समस्याओं का मौके पर ही निराकरण कराया तो कुछ समस्याओं के निराकरण की रूपरेखा तय की। शिविरों के माध्यम से खासतौर पर फॉर्मर आईडी, ई-केवायसी, सीमांकन, बटवारा, अभिलेख दुरुस्ती एवं स्वामित्व योजना इत्यादि से संबंधित समस्यायें हल की गई। इसके अलावा पीएम किसान पोर्टल पर ई-केवायसी, भू-लेख रिकॉर्ड की आधार से लिंकिंग एवं बैंक खाते से आधार लिंक कराकर डीबीटी (डायरेक्ट बेनीफिट ट्रांसफर) का काम भी इस दौरान किया गया। साथ ही नामांतरण, बटवारा व सीमांकन प्रकरणों के निराकरण की रूपरेखा तय की। ग्रामीणों से यह भी कहा गया कि यदि गाँव के परंपरागत रास्ते पर अतिक्रमण हो तो अवश्य बताएं, राजस्व अधिकारी इन रास्तों को खुलवायेंगे। ज्ञात हो 15 नवम्बर से राजस्व महाअभियान 3.0 शुरू हुआ यह अभियान 15 दिसम्बर तक चलेगा। अभियान की मॉनीटरिंग के लिए जिला प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारी भी गाँव-गाँव पहुँच रहे हैं। कलेक्टर श्रीमती रुचिका चौहान ने किसानों से कहा कि अगले दिसम्बर माह से उन्हीं किसानों को पीएम किसान सम्मान निधि का लाभ मिलेगा, जिनकी फॉर्मर रजिस्ट्री होगी। इसलिए वे अपनी फॉर्मर आईडी अवश्य बनवा लें।

15वीं पुण्य स्मरण पर विनम्र श्रद्धांजलि

जन्मः 14.08.1947 निर्वाणः 01.12.2009

स्व. श्री सोबरन सिंह मावई (पूर्व विधायक मुरैना)

तुम्हें हर पल याद करते हैं, अश्रुमाला पिरोते है तुम्हारी मोहक तस्वीर को नजरों में संजोते हैं
भाव-विव्हल हृदय से हम परिवार जन श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं।

श्रद्धानवत- श्रीमती आशारानी मावई (पत्नी), करतार सिंह मावई (बड़े भाई), नरेन्द्र सिंह मावई (छोटे भाई), शिवनाथ प्रताप सिंह मावई, प्रबल प्रताप सिंह मावई महामंत्री प्रदेश कांग्रेस कमेटी मध्यप्रदेश (पुत्रगण), श्रीमती सरला-अशोक सिंह धावई प्रदेश मंत्री व कार्यसमिति सदस्य भाजपा राजस्थान (पुत्री-दामाद), रविन्द्र सिंह, राकेश मावई पूर्व विधायक मुरैना, राय प्रताप सिंह, रामेन्द्र प्रताप सिंह, मण्डलेश्वर प्रताप सिंह मावई (भतीजे), धीरेन्द्र सिंह, चेतन सिंह, पार्थ प्रताप सिंह, सोनू प्रताप सिंह, तरूण सिंह, विवेक प्रताप सिंह, कनिष्ठ प्रताप सिंह, दुष्यंत प्रताप सिंह, देवराज, राजवर्धन, हर्षवर्धन (नातीगण)
एवं समस्त मावई परिवार साई कृपा जयनगर कोठी गणेशपुरा मुरैना (म.प्र.)

स्वामित्वाधिकारी प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक चन्द्रप्रकाश शिवहरे के लिए श्रीसिद्धीविनायक प्रिन्टर्स, 26 बी, प्रेस कॉम्पलेक्स जोन -1 एम.पी. नगर भोपाल मध्यप्रदेश से मुद्रित एवं 5-अपूर्वा एन्क्लेव, अयोध्या बाईपास, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। आर.एन.आई नं. MPHIN/2007/18768
संपादक चन्द्रप्रकाश शिवहरे 94251-26060, संयुक्त संपादक- नीरज शिवहरे 9827359400, सहायक संपादक- संजय माकवे 9425375149, भोपाल कार्यालय- 5 अपूर्वा एन्क्लेव, अयोध्या बाईपास, भोपाल सभी विवादों का न्याय क्षेत्र भोपाल न्यायालय होगा।